RNI No. RAJHIN/2020/11458

वर्षः 5 अंकः12 दिसंबर, 2025 मूल्यः 60 रु. पृष्ठ : 44

राजस्थान टुडे

विश्वास व विवाद के बीच खड़ा लोकतंत्र
7

SIR पर बवालः ममता और सत्ता की चुनावी जंग
6

वोट चोरी बनाम शुद्धीकरणः बिहार के बहाने उठे बड़े सवाल
5

बिहार का बाजीगर
10

नया आतंक, नई चुनौती
30

AYUSHI
BUILDCON PVT. LTD.

AYUSHI
BUILDERS & DEVELOPERS

221-222, Shyam Nagar, Pal Link Road, Jodhpur - 342 003 (Raj.)
Tel. : 0291-2710071 Mobile : 94141 27593, 93147 11416
E-mail : mdsharma74@live.in

राजस्थान टुडे

आपकी पत्रिका, आपकी बात

www.rajasthantoday.online

RNI No. RAJHIN/2020/11458

वर्ष 5, अंक 12, दिसंबर 2025

(प्रत्येक माह 15 तारीख को प्रकाशित)

प्रधान सम्पादक
दिनेश रामावत

राजनीतिक सम्पादक
सुरेश व्यास

सम्पादक
अजय अस्थाना

प्रबंध सम्पादक
राकेश गांधी

सह सम्पादक
बलवंत राज मेहता

रेखाचित्र
राजेंद्र यादव

संपादकीय कार्यालय
बी-4, फोर्थ फ्लोर, एम.आर. हाईट्स
महावीर कॉलोनी, भास्कर सर्किल,
रातानाड़ा, जोधपुर - 342011
व्हाट्सएप नंबर - 8107800000
ई-मेल - rajasthantoday@gmail.com

सभी विवादों का निपटारा जोधपुर की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों और फोरमों में किया जाएगा।

राजस्थान टुडे में प्रकाशित आलेख लेखकों की राय है। इसे राजस्थान टुडे की राय नहीं समझा जाए। राजस्थान टुडे के मुद्रक, प्रकाशक और सम्पादक इसके लिए जिम्मेदार नहीं होंगे। हमारी भावना किसी वर्ग या व्यक्ति को आहत करना नहीं है। विज्ञापनदाताओं के किसी भी दावे का उत्तरदायित्व राजस्थान टुडे का नहीं होगा।

• मारवाड़ मीडिया प्लस के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक पूनम अस्थाना द्वारा बी-4, फोर्थ फ्लोर, महावीर कॉलोनी, रातानाड़ा, जोधपुर-342011 से प्रकाशित और डी.बी. कॉर्प लिमिटेड, 01 पार्श्वनाथ इंडस्ट्रीयल एरिया, रिलायंस वेयर हाउस के पास, मोगरा कलां, जोधपुर-342802 में मुद्रित, संपादक : अजय अस्थाना।

अंदर विशेष

4 अपनी बात
'कागज़ों' में फंसा आम भारतीय

नियमित कालम
18 बोल हरि बोल
21 बात बेलगाम
38 अभिव्यक्ति
42 ग्रहों की चाल

30 दुस्साहस: नया आतंक, नई चुनौती

36 टेस्ट क्रिकेट की डगमगाती दीवार

41 धर्मेंद्र : सिनेमा का जन्मजात नायक

5 वोट चोरी बनाम शुद्धिकरण: बिहार के बहाने उठे बड़े सवाल

6 SIR पर बवाल : ममता बनाम सत्ता की चुनावी जंग

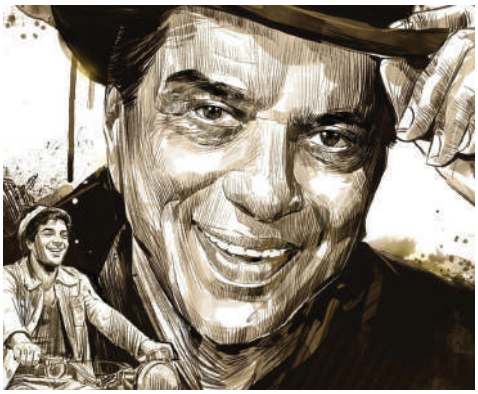

07 आवरण कथा...
विश्वास व विवाद के बीच खड़ा लोकतंत्र

10 बिहार चुनाव...
बिहार का बाजीगर

13 अंता उप चुनाव...
जीत-हार ने बदली सियासी फिजां

16 अंता उप चुनाव...
ले डूबी आपसी खींचतान

19 देश-विदेश...
दबाव, भरोसा और भारतीय संतुलन

24 संवेदनहीनता...
कुपोषण की मार, व्यवस्था की असफलता

26 भ्रमजाल...
छूट का अजीब खेला

28 स्वास्थ्य...
जड़ी-बूटियों की ओर लौटती दुनिया

32 राजनीति...
बाड़मेर में अपने फैसले से घिरी कांग्रेस

39 ठाट-बाट...
राजघराने 'आम', तो 'आम' हुए राजसी

'कागज़ों' में फंसा आम भारतीय

दिनेश रामावत ✍ प्रधान सम्पादक

भारत में नागरिकता का सवाल दुनिया के किसी भी लोकतंत्र से कहीं ज़्यादा भावनात्मक, सामाजिक और राजनीतिक है। कारण भी बेहद साफ हैं—यह देश कागज़ों के सहारे नहीं, रिश्तों, यादों और मिट्टी की महक पर चलता आया है। करोड़ों लोग अपनी पहचान जन्म प्रमाण-पत्रों से नहीं, बल्कि अपनी बोली, अपने गांव और अपने परिवार के इतिहास से पाते रहे हैं। लेकिन अब नागरिकता और पहचान का जो कागज़ी बोझ आम आदमी पर लाद दिया गया है, उसने लोगों को असुरक्षा, डर और संदेह के दायरे में धकेल दिया है।

समस्या की जड़ यह है कि भारत में नागरिकता का कोई एक अंतिम और सार्वभौमिक दस्तावेज़ है ही नहीं। आधार है, पर वह नागरिकता का प्रमाण नहीं। वोटर आईडी है, लेकिन वह भी पूरी तरह अंतिम नहीं। पासपोर्ट है, पर सबके पास नहीं और यह भी नागरिकता का शत-प्रतिशत प्रमाण नहीं माना जाता। और एनआरसी—जिसकी सबसे ज़्यादा जरूरत थी—वह अब तक देश में लागू ही नहीं हो पाया है।

यहां सबसे गंभीर बात यह है कि गांव के किसान, शहर के मज़दूर, दिहाड़ी पर काम करने वाली महिलाओं, और उम्रदराज़ बुजुर्गों के पास उतने ही कागज़ होते हैं जितने ज़िंदगी ने उन्हें दिए हैं। किसी ने स्कूल नहीं देखा, तो वह स्कूल प्रमाणपत्र कहां से लाए? किसी का जन्म घर पर हुआ, वह भी 40–50 साल पहले, तो उस समय जन्म प्रमाण-पत्र किसने बनवाया होगा? किसी ने पुरानी बाढ़ में कागज़ खो दिए, किसी ने आग में। बहुत से लोग रोज़गार की तलाश में गांव-शहर बदलते रहे, पता और पहचान बदलती रही। तो क्या यह सब लोग नागरिक नहीं? क्या कागज़ कम होने भर से ये लोग संदिग्ध हो जाते हैं? यही सवाल इस पूरे विमर्श को सबसे अधिक संवेदनशील बनाता है। आधार ने इस उलझन को और बढ़ाया है। यह देश का सबसे व्यापक पहचान दस्तावेज़ है—गरीब, अमीर, वृद्ध, बच्चे—लगभग सभी के पास है। आधार रोज़मर्रा की हर सुविधा में आवश्यक है: गैस सब्सिडी, बैंक खाता, पेंशन, राशन, अस्पताल, स्कूल—सब आधार से जुड़े हुए हैं। ऐसे में आम आदमी के मन में यह विश्वास बन गया कि "आधार है, तो मैं इस देश का पक्का नागरिक हूं।" लेकिन कठोर सच्चाई यह है कि आधार सिर्फ पहचान है, नागरिकता नहीं। सुप्रीम कोर्ट कई बार यह साफ कर चुका है। और यही बात आम आदमी को सबसे ज़्यादा असहज करती है—जब आधार ही एकमात्र दस्तावेज़ हो और वह नागरिकता साबित भी न करे, तो फिर विश्वास किस पर टिके?

इसी बीच सुप्रीम कोर्ट का हालिया फैसला सामने आया, जिसने पहचान के सवाल को नई दिशा दे दी। बिहार में मतदाता सूचियों पर उठे विवादों के बाद अदालत से पूछा गया कि पहचान प्रमाण के लिए कौन-से दस्तावेज़ स्वीकार किए जाएं। चुनाव आयोग ने सात दस्तावेज़ सुझाए थे, लेकिन कोर्ट ने कहा कि यह सूची बहुत सीमित है और देश के लोगों की विविध स्थितियों को नज़रअंदाज़ करती है। कोर्ट ने दस्तावेज़ों की संख्या बढ़ाकर ग्यारह कर दी और यह साफ कर दिया कि पहचान को सिर्फ दो-तीन कागज़ों में कैद नहीं किया जा सकता। हर नागरिक की जीवन-यात्रा अलग होती है, उसके दस्तावेज़ उसकी परिस्थिति तय करती है।

सुप्रीम कोर्ट का सबसे तीखा संदेश यह था कि अगर SIR जैसी प्रक्रियाओं में कोई अनियमितता हुई, तो वह मतदाता सूची को रद्द करने से भी पीछे नहीं हटेगा। यह केवल चुनाव आयोग को नहीं, पूरे देश को चेतावनी थी—कि पहचान और नागरिकता जैसे संवेदनशील विषय पर कोई खिलवाड़ स्वीकार नहीं किया जाएगा।

अब नागरिकता की मूल समस्या पर लौटें। भारत में ऐसा कोई एक दस्तावेज़ है ही नहीं जो अंतिम प्रमाण के रूप में स्वीकार्य हो। पासपोर्ट सभी के पास नहीं, कमी भी कई हैं। वोटर आईडी मजबूत है, पर उसकी विश्वसनीयता पर सवाल भी उठते रहे हैं। राशन कार्ड सामाजिक-आर्थिक स्थिति बताता है, नागरिकता नहीं। और आधार, जैसा बार-बार कहा गया, नागरिकता सिद्ध ही नहीं करता। तो फिर नागरिकता किस पर टिके? किस आधार पर एक नागरिक खुद को इस देश का अटूट हिस्सा महसूस करे?

यहां यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि क्या भारत को एनआरसी चाहिए? जवाब है—हां, लेकिन वह वाला एनआरसी नहीं जिसे सुनकर देश में डर फैल जाता है। भारत को ऐसा एनआरसी चाहिए जो किसी को डराए नहीं, किसी गरीब को "संदिग्ध" की लाइन में न खड़ा कर दे, और किसी बुजुर्ग को इस चिंता में न धकेले कि "अगर कागज़ न मिला, तो क्या मैं नागरिक नहीं माना जाऊंगा?"

एनआरसी का उद्देश्य नागरिकों को बाहर धकेलना नहीं होना चाहिए। उसका मकसद यह होना चाहिए कि देश के हर नागरिक को एक स्थायी, विश्वसनीय और सम्मानजनक पहचान मिले। एनआरसी अगर आधुनिक, तकनीक-सहयोगी, पारदर्शी और मानवीय हो, तो यह भारत की सबसे बड़ी प्रशासनिक समस्या को हल कर सकता है। आधार इस प्रक्रिया में बड़ी भूमिका निभा सकता है—लेकिन सहायक दस्तावेज़ के रूप में, न कि नागरिकता के प्रमाण के रूप में। आधार की खासियत है कि यह व्यक्ति की पहचान को तकनीक के सहारे सुरक्षित रखता है। लेकिन यह तभी उपयोगी है जब अंतिम निर्णय किसी व्यापक और बहु-स्तरीय नागरिकता ढांचे से आए, जिसमें दस्तावेज़ों की विविधता का सम्मान हो।

भारत जैसा विशाल और विविध देश केवल कागज़ों पर नहीं चलता। यहां पहचान कानूनी शब्द नहीं, सम्मान और अपनापन है। नागरिकता वह भावना है जो यह कहती है कि "यह देश मेरा है, और मैं इस देश का हूं।" लेकिन आज स्थिति यह है कि आदमी को हर कदम पर अपनी पहचान साबित करनी पड़ती है—बिजली कनेक्शन से लेकर गैस, स्कूल, अस्पताल, पेंशन, पासपोर्ट और अंत में वोटर सूची तक। यह बोझ किसी भी लोकतंत्र की बुनियाद को कमजोर करता है।

जब तक नागरिकता का कोई एक स्पष्ट और सर्वमान्य दस्तावेज़ नहीं होगा, यह बोझ बना रहेगा। और लोग इसी कागज़ी चक्की में पीसे जाते रहेंगे। देश को अब ऐसी नागरिकता व्यवस्था चाहिए जिसमें संवेदनशीलता सबसे ऊपर हो। गरीब, प्रवासी, बुजुर्ग या मेहनतकश लोग कभी भी परफेक्ट कागज़ नहीं दिखा सकते—और उन्हें "संदिग्ध" मान लेना न केवल अन्याय है, बल्कि यह उन्हें सम्मानहीन बना देता है।

सुप्रीम कोर्ट का हालिया फैसला हमें बता रहा है कि भारत को पहचान और नागरिकता पर नई सोच अपनानी होगी। यह सिर्फ कागज़ों का सवाल नहीं, भरोसे का सवाल है। जब नागरिक को यह भरोसा होगा कि उसकी पहचान सुरक्षित है, तभी वह लोकतांत्रिक ढांचे पर विश्वास कर सकेगा। और जब वह अपने ही देश में खुद को साबित करने की मजबूरी से मुक्त होगा, तभी नागरिकता का असली अर्थ जीवन में उतर पाएगा। भारत को एक आधुनिक, पारदर्शी, मानवीय और तकनीक-समर्थित नागरिकता ढांचे की जरूरत है—जो आधार को सहायक माने, दस्तावेज़ों की विविधता का सम्मान करे, और हर व्यक्ति की परिस्थितियों को समझकर उसके अधिकारों को सुरक्षित करे। अगर देश यह कर पाया, तो नागरिकता का सवाल डर नहीं, भरोसे और सम्मान की बात बन जाएगा—और यही किसी भी लोकतंत्र की सबसे मजबूत बुनियाद है।

वोट चोरी बनाम शुद्धिकरणः बिहार के बहाने उठे बड़े सवाल

SIR विवाद और वोट चोरी के आरोपों के बीच प्रधानमंत्री मोदी ने बिहार चुनावों को शांतिपूर्ण बताते हुए चुनाव आयोग की खुलकर तारीफ की। यह बयान विपक्ष के नरेटिव को चुनौती देता है और चुनावी संस्थाओं की विश्वसनीयता पर नई बहस खड़ी करता है।

देश की राजनीति में इस वक्त सबसे बड़ा सवाल यही है कि चुनाव आयोग पर भरोसा किया जाए या नहीं। विपक्ष चीख-चीखकर कह रहा है कि वोट चोरी हो रही है, SIR के नाम पर मतदाता सूचियाँ काटी-छाँटी जा रही हैं, और चुनाव आयोग सरकार की जेब में चला गया है। ऐसे माहौल में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का चुनाव आयोग को 'देश का गर्व' बताना एक सीधा राजनीतिक संदेश है, और यह संदेश विपक्ष के नरेटिव पर सीधा प्रहार भी करता है।

प्रधानमंत्री ने बिहार में एनडीए की बड़ी जीत के बाद जो कुछ कहा, वह सिर्फ पुराने दिनों की याद नहीं थी, बल्कि आज की राजनीति को दिशा देने वाला बयान था। उन्होंने कहा कि 2005 से पहले बिहार में चुनाव मतलब हिंसा, बैलट बॉक्स चोरी और बड़े स्तर पर पुनर्मतदान। यह बात सही है, लेकिन इसे कहने का समय और मंच यह साफ कर देता है कि यह टिप्पणी सिर्फ इतिहास नहीं, बल्कि आरजेडी के तथाकथित 'जंगल राज' को चुनावी विमर्श में वापस खड़ा करने की रणनीति भी है।

प्रधानमंत्री ने कहा कि इस बार बिहार में एक भी पुनर्मतदान की जरूरत नहीं पड़ी, मतदान शांतिपूर्ण रहा, और चुनाव आयोग ने शानदार काम किया। यह सब कहते हुए उन्होंने साफ संकेत दिया कि जो लोग आज आयोग पर सवाल उठा रहे हैं, वे या तो चुनावी हार से परेशान हैं या जानबूझकर संस्थाओं में अविश्वास फैलाने की कोशिश कर रहे हैं। यह टिप्पणी किसी तकनीकी विवरण से ज्यादा एक राजनीतिक मुद्रा है, एक ऐसी मुद्रा जो सरकार को चुनावी संस्थाओं का संरक्षक और विपक्ष को अविश्वास का सौदागर बनाती है।

मजेदार बात यह है कि यह सब तब हो रहा है जब SIR को लेकर विपक्ष का आरोप है कि मतदाता सूची से लाखों नाम हटाए गए, और यह सब सत्तारूढ़ दल के फायदे के लिए किया गया। ऐसे समय में प्रधानमंत्री का यह कहना कि युवा मतदाता 'शुद्धिकरण' को गंभीरता से लेते हैं, दरअसल विपक्ष की आलोचना का प्रतिउत्तर है। यह तर्क दिया जा रहा है कि फर्जी नाम हटाना लोकतांत्रिक प्रक्रिया का हिस्सा है, जबकि विपक्ष कहता है कि इसी प्रक्रिया के बहाने असली मतदाताओं के नाम गायब किए गए। इसीलिए 'शुद्धिकरण' आज सिर्फ प्रशासनिक शब्द नहीं, बल्कि राजनीतिक हथियार बन चुका है।

प्रधानमंत्री ने कांग्रेस और राहुल गांधी पर भी बिना नाम लिए तंज कसा कि वे हर संस्था पर हमला करते हैं, 'वोट चोरी' जैसे मुद्दे खड़े करते हैं, लेकिन देश के लिए कोई सकारात्मक दृष्टि नहीं दे पाते। यह तीर सीधे विपक्ष की राजनीति पर छोड़ा गया था। आज राजनीति की असली लड़ाई नीतियों की नहीं, नैरेटिव की है, कौन संस्थाओं को विश्वसनीय बताता है और कौन संदेह का धुंध फैलाता है। और पीएम मोदी का पूरा भाषण इसी नैरेटिव पर केंद्रित था।

अब बड़ा सवाल यह है कि क्या प्रधानमंत्री की यह प्रशंसा चुनाव आयोग के लिए ढाल बनेगी? कागजों पर बिहार चुनाव शांतिपूर्ण रहे, यह बात सही है। लेकिन क्या इससे SIR पर उठ रहे सवाल खत्म हो जाते हैं? बिल्कुल नहीं। लोकतंत्र में भरोसा सिर्फ बयानबाजी से नहीं बनता, प्रक्रियाओं की पारदर्शिता से बनता है। विपक्ष यह मुद्दा यहीं नहीं छोड़ेगा, और चुनाव आयोग को भी समझना होगा कि निष्पक्ष होना ही काफी नहीं, निष्पक्ष दिखाई देना उससे भी बड़ा काम है।

भारतीय राजनीति में बयान युद्ध तो चलता रहेगा, लेकिन इस पूरी बहस का केंद्र वही रहेगा, मतदाता सूची, उसकी शुद्धता और चुनाव आयोग की विश्वसनीयता। प्रधानमंत्री की प्रशंसा सरकार की तरफ से संस्थाओं को मिल रहा समर्थन दिखाती है, लेकिन विपक्ष के सवाल कहीं नहीं जा रहे। लोकतंत्र की असली परीक्षा तभी होगी जब प्रक्रिया स्वयं बोलेगी, न कि सिर्फ नेता।

SIR पर बवाल : ममता बनाम सत्ता की चुनावी जंग

ममता बनर्जी ने SIR प्रक्रिया को "आपदा" बताते हुए आरोप लगाया कि सरकार मतदाता सूची के जरिए यह तय कर रही है कि वोट कौन देगा। यह विवाद बंगाल से उठकर राष्ट्रीय लोकतंत्र और चुनावी विश्वसनीयता की लड़ाई में बदल गया है।

पश्चिम बंगाल की राजनीति हमेशा उबाल पर रहती है, लेकिन इस बार मामला सिर्फ बंगाल का नहीं, पूरे देश की चुनावी आत्मा का है। ममता बनर्जी ने जिस तरह SIR यानी विशेष पुनरीक्षण को "आग से खेलने" जैसा बताया है, वह सिर्फ असंतोष नहीं, बल्कि सत्ता के खिलाफ खुली चेतावनी है। उन्होंने कहा कि मतदाता सूची का पहला ड्राफ्ट "आपदा" होगा। यह कोई हल्का वाक्य नहीं। यह उस भरोसे पर चोट है, जिस पर देश का लोकतंत्र टिका हुआ है।

ममता बनर्जी का आरोप है कि दो महीने में मतदाता सूची का पुनरीक्षण संभव ही नहीं। वह कहती हैं कि यह काम तीन साल लेता है, लेकिन भाजपा और चुनाव आयोग इसे बिजली की गति से निपटाना चाहते हैं। "सभी तरह का गलत डेटा भरा जा रहा है", यह आरोप प्रशासनिक नहीं, राजनीतिक ध्वंस का आरोप है। इससे वह यह बताना चाहती हैं कि खेल निष्पक्ष नहीं है, और मैदान उसी के मुताबिक तैयार किया जा रहा है कि किसे वोट देने की अनुमति होगी और किसे सूची से काट दिया जाएगा।

ममता ने कहा, "पहले जनता तय करती थी कि सरकार कौन बनाएगी। अब सरकार तय कर रही है कि वोट कौन डालेगा।" यह वाक्य भारतीय लोकतंत्र के दिल पर सीधा प्रहार है। और यह हमला किसी गुस्से में दिया गया बयान नहीं, यह एक राजनीतिक चेतावनी है कि SIR के नाम पर जो कुछ हो रहा है, वह लोकतंत्र को कमजोर करने की कोशिश है। वह कहती हैं कि आधार, पैन, बैंक डॉक्यूमेंट, सबका कोई मतलब नहीं रह गया। मतलब, अब दस्तावेज़ नहीं, सत्ता की इच्छा ही तय करती है कि आप मतदाता हैं या नहीं।

ममता की शैली ऐसी है कि जब वह निशाना साधती हैं, तो सीधा जहां चोट करनी हो, वहीं करती हैं। उन्होंने कहा, "जो भाजपा कहती है वही होता है। हमेशा Yes Papa. भाजपा के बिना कोई Papa नहीं।" यह व्यंग्य नहीं, एक गहरी राजनीतिक टिप्पणी है। इसमें वह भाजपा-शासन वाले तंत्र को कठघरे में खड़ा कर रही हैं और बता रही हैं कि चुनाव आयोग भले ही नाम लेकर निशाने पर न आए, पर उनकी नज़र में उसका संचालन किसके हाथ में है, यह देश को समझना चाहिए।

ममता ने यह भी कहा कि 2029 भाजपा के लिए "खतरनाक साल" होगा और सरकार जाएगी। यह सिर्फ भविष्यवाणी नहीं, यह राजनीति में अपनी वापसी की रणनीतिक घोषणा है। वह साफ संदेश दे रही हैं कि SIR अगर ग़ैर-पारदर्शी रहा, तो वह इसे राष्ट्रीय आंदोलन बनाएँगी। उन्होंने कहा कि 2026 के विधानसभा चुनावों के बाद वह पूरा देश घूमेंगी। यानी लड़ाई अब बंगाल की सीमाओं में कैद नहीं है।

असल सवाल यही है कि SIR के बहाने क्या वाकई मतदाता सूची से छेड़छाड़ हो रही है? विपक्ष लंबे समय से यह दावा करता रहा है कि मतदाता सूची का संशोधन भाजपा की "राजनीतिक इंजीनियरिंग" का हिस्सा है, जहां असल मतदाता हटाए जाते हैं और नए नाम जोड़े जाते हैं ताकि चुनावी गणित बदले। ममता उसी आरोप को और तीखे स्वर में सामने ला रही हैं। भाजपा इसे सुधार बताती है और विपक्ष इसे सत्ता का खेल।

लेकिन यह बात तय है कि अगर मतदाता सूची ही विवाद में आ जाए, तो चुनाव पर भरोसा कैसे बचेगा? लोकतंत्र की शुरुआत मतदाता से होती है। यदि मतदाता ही संदिग्ध बना दिया जाए या यह तय करने का अधिकार सरकार के हाथों में आ जाए तो चुनाव सिर्फ एक रस्म बनकर रह जाएगा। और यही डर ममता बनर्जी उभार रही हैं।

चुनाव आयोग के लिए यह वक्त सबसे बड़ी परीक्षा का है। उसे साबित करना होगा कि SIR राजनीतिक दबाव में नहीं, पारदर्शिता और नियमों के आधार पर हो रहा है। क्योंकि लोकतंत्र की सबसे बड़ी ताकत वही मतदाता है, जिसका नाम सूची में हो या न हो, यह सवाल आज बड़ा बन गया है।

मतदाता सूची का विशेष गहन पुनरीक्षण-2026

विश्वास व विवाद के बीच खड़ा लोकतंत्र

निर्वाचन आयोग के विशेष गहन पुनरीक्षण-2026 ने राजनीतिक हलचल तेज कर दी है। सरकार इसे चुनावी व्यवस्था को स्वच्छ बनाने का प्रयास बताती है, जबकि विपक्ष इसे नागरिकों को सूची से बाहर करने की आशंका के रूप में देख रहा है। प्रश्न यह है कि क्या यह प्रक्रिया लोकतंत्र को मजबूत करेगी या उसे अनावश्यक विवादों में धकेल देगी।

राकेश गांधी वरिष्ठ पत्रकार

भारत में चुनाव केवल राजनीतिक दावपेंचों का संसार नहीं है। यह वह रास्ता है जिसके जरिये साधारण नागरिक अपनी इच्छा और भरोसे को सरकार तक पहुंचाता है। इसलिए यह जरूरी है कि मतदाता सूची बिलकुल साफ सुथरी हो, ताकि जनता के मत का सम्मान हो और चुनावी व्यवस्था पर किसी तरह का सन्देह न रहे। लेकिन जब खुद सूची पर ही सवाल उठने लगें, उसमें गड़बड़ी के आरोप लगने लगें या उसकी शुद्धता पर भ्रम के बादल मंडराने लगें तो लोकतंत्र का पूरा ढांचा असहज दिखाई देने लगता है।

इसी माहौल में निर्वाचन आयोग ने विशेष गहन पुनरीक्षण-2026 आरम्भ किया है, जो आज पूरे देश में चर्चा का मुख्य कारण बन गया है। सरकार और आयोग इसे व्यवस्था सुधारने का बड़ा कदम बता रहे हैं। उनका कहना है कि इससे मतदाता सूची पहले से अधिक भरोसेमंद होगी और मृत, लापता तथा दोहरी प्रविष्टियों जैसी त्रुटियां खत्म होंगी। दूसरी ओर विपक्ष का मानना है कि यह अभियान सिर्फ जांच नहीं, बल्कि छंटाई साबित हो सकता है, जिसमें गरीब और दस्तावेज रहित नागरिकों को सूची से बाहर कर देने का जोखिम बढ़ जाता है। यही खींचतान आम मतदाता को असमंजस में डाल रही है।

विशेष पुनरीक्षण क्या है और क्यों आवश्यक बताया जा रहा

- यह प्रक्रिया देश भर में चल रहा एक बड़ा प्रशासनिक अभियान है। इसके तहत आयोग के कर्मचारी घर- घर जाकर यह देखते हैं कि मतदाता सूची में दिया गया नाम सही पते से मेल खाता है या नहीं और वह व्यक्ति सचमुच उस क्षेत्र का निवासी और भारत का नागरिक है या नहीं। सैद्धांतिक स्तर पर यह प्रक्रिया स्वाभाविक और आवश्यक है, क्योंकि लोकतंत्र तभी मजबूत होता है जब सूची से सभी गलत नाम हटें और हर पात्र नागरिक को मौका मिले कि उसका नाम सही स्थान पर दर्ज हो।
- लेकिन जहां काम बड़ा हो, वहां आशंकाएं भी उतनी ही बड़ी होती हैं। सूची का प्रत्येक नाम अपने साथ राजनीतिक समीकरण की अहमियत भी रखता है। इसलिए किसी नाम का हटना या जुड़ना केवल कागजी कार्यवाही नहीं रह जाता, बल्कि अनेक दलों के भविष्य और उनके वोट आधार को भी प्रभावित करता है। यही कारण है कि विपक्ष इसे लेकर अत्यंत चौकन्ना हो गया है।

इस प्रक्रिया में तकनीक की दोहरी भूमिका

- पुनरीक्षण प्रक्रिया में अब तकनीक का भी व्यापक इस्तेमाल हो रहा है। आयोग डी-डुप्लीकेशन सॉफ्टवेयर का उपयोग करता है, ताकि एक ही व्यक्ति का नाम दो अलग- अलग स्थानों पर न हो। इसके अलावा, आधार को वोटर आईडी से लिंक करने की स्वैच्छिक मुहिम भी सूची की स्वच्छता में सहायक मानी जाती है।
- लेकिन तकनीक पर निर्भरता ने नई चिंताएं भी पैदा की हैं। विपक्ष का मानना है कि सॉफ्टवेयर कई बार समान नाम, पता या उम्र वाले गरीब लोगों को गलत तरीके से 'डुप्लीकेट' मानकर हटाने की सिफारिश कर देता है। इसके अलावा, आधार लिंकिंग को स्वैच्छिक होने के बावजूद, कर्मचारी कई बार गरीब नागरिकों पर इसे जमा करने का अनुचित दबाव डालते हैं, जिससे वे अपने नाम कटने के डर से सूची से दूर भागते हैं।

विपक्ष का पहला आरोप : दस्तावेज रहित गरीबों पर दबाव

विपक्ष का मानना है कि यह प्रक्रिया सबसे अधिक दबाव उस वर्ग पर डाल रही है, जिसके पास कागजी प्रमाण बहुत कम हैं। देश की एक बड़ी आबादी अभी भी ऐसे घरों में रहती है जहां न तो स्थायी पता होता है और न ही जन्म प्रमाण-पत्र, भूमि-पत्र या निवास प्रमाण जैसे दस्तावेज उपलब्ध होते हैं। यह परिवार अक्सर काम की तलाश में विभिन्न स्थानों पर जाते रहते हैं। ऐसे नागरिक जब अचानक आयोग के कर्मचारियों द्वारा पूछताछ और दस्तावेज की मांग का सामना करते हैं तो स्वाभाविक रूप से घबरा जाते हैं। विपक्ष का आरोप है कि इस स्थिति का लाभ उठाकर उनके नाम आसानी से काटे जा सकते हैं। कई राज्यों में गरीब और मजदूर वर्ग का रुझान विपक्षी दलों के प्रति अधिक देखा गया है, इसलिए यह आरोप और तीखा हो जाता है। खासकर फॉर्म-7 का इस्तेमाल करके नाम हटाने की प्रक्रिया सबसे विवादास्पद होती है। आयोग को यह सुनिश्चित करना होगा कि किसी भी नाम को हटाने से पहले उचित सुनवाई और नोटिस दिया जाए।

दस्तावेज़ों की उलझन और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

▪ मतदाता पंजीकरण के लिए पहचान और आयु प्रमाणों की स्वीकार्यता भारत में समय के साथ विकसित हुई है, जो प्रशासनिक सुविधा और कानूनी आवश्यकताओं के बीच संतुलन साधती रही है। शुरुआती दौर में, जन्म प्रमाण-पत्र या स्कूल द्वारा जारी किए गए दसवीं या बारहवीं की मार्कशीट को आयु और नागरिकता दोनों के लिए मजबूत प्रमाण माना जाता था। ये दस्तावेज़ किसी व्यक्ति की पहचान को उसके निवास और शैक्षणिक रिकॉर्ड से जोड़ते थे।

▪ जैसे- जैसे आधार कार्ड का प्रचलन बढ़ा, यह एक सुविधाजनक और व्यापक रूप से उपलब्ध पहचान पत्र बन गया। निर्वाचन आयोग ने इसे व्यापक रूप से स्वीकार करना शुरू कर दिया, विशेष रूप से पहचान और निवास के प्रमाण के लिए। हालांकि, यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि आधार कार्ड केवल निवास का प्रमाण है, नागरिकता का नहीं। इसीलिए, मतदाता सूची की शुद्धता सुनिश्चित करने के लिए अब यह नियम स्पष्ट किया गया है कि केवल आधार कार्ड को नागरिकता या आयु का एकमात्र प्रमाण नहीं माना जाएगा। आयोग अब भी मतदाता पंजीकरण के लिए अन्य वैध दस्तावेज़ों (जैसे पासपोर्ट, जन्म प्रमाण-पत्र, या शैक्षणिक प्रमाण-पत्र) के साथ आधार को एक सहायक दस्तावेज़ के रूप में स्वीकार करता है, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि कोई भी पात्र नागरिक सिर्फ एक दस्तावेज़ की कमी के कारण बाहर न रहे, लेकिन साथ ही चुनावी प्रक्रिया की कानूनी शुद्धता बनी रहे।

दूसरा आरोप : नागरिकता की जांच समान रूप से नहीं हो रही

विपक्ष का कहना है कि नागरिकता की जांच का तरीका एक समान नहीं है। कुछ क्षेत्रों पर विशेष निगरानी रखी जा रही है, जबकि कुछ इलाकों को साधारण जांच से ही पार कर दिया जा रहा है। खासकर वे क्षेत्र जहां अल्पसंख्यक नागरिक या विपक्षी मतदाता अधिक हैं, वहां यह प्रक्रिया अधिक कठोर बताई जा रही है। विपक्ष को डर है कि इस असमानता के जरिये राजनीतिक लाभ लेने की कोशिश की जा सकती है और कुछ वर्गों को व्यवस्थित रूप से सूची से बाहर किया जा सकता है।

तीसरी आशंका : आयोग की स्वतंत्रता पर ही सवाल

विपक्ष को यह भी शिकायत है कि आयोग इस समय पहले जैसी स्वतंत्रता प्रदर्शित नहीं कर रहा। उनका आरोप है कि अनेक नीतियां सरकार की इच्छा के अनुकूल प्रतीत होती हैं। हाल के कुछ निर्णयों ने इस आशंका को और बढ़ाया है, जिससे विपक्ष का भरोसा कमजोर हुआ है। लोकतंत्र में आयोग की प्रतिष्ठा उसकी निष्पक्षता से ही बनती है। यदि कोई भी दल उसकी निष्पक्षता पर प्रश्न उठा दे तो पूरी प्रक्रिया पर शक की छाया पड़ जाती है।

सरकार का पक्ष

सूची को स्वच्छ करना ही लोकतंत्र की मजबूरी

सरकार और आयोग इस पूरे विवाद का अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। उनका कहना है कि मतदाता सूची में वर्षों से कई त्रुटियां जमा होती जाती हैं। मृत व्यक्तियों के नाम बने रहते हैं, कई लोग अन्य राज्यों में जाकर बस जाते हैं, लेकिन पुराने पते पर भी उनका नाम दर्ज होता रहता है। कहीं- कहीं लोग जानबूझ कर दो स्थानों पर नाम दर्ज करा लेते हैं। इससे न केवल गड़बड़ी होती है, बल्कि परिणाम भी प्रभावित हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में सूची की सफाई और सुधार जरूरी हो जाता है।

सरकार कहती है : घर- घर जाकर जांच करना नागरिकों के हित में

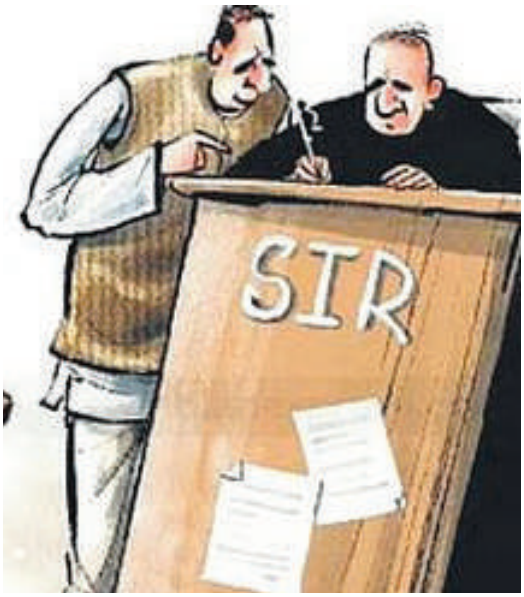

सरकार का यह भी तर्क है कि यह प्रक्रिया किसी पर दबाव डालने के लिए नहीं, बल्कि लोगों को जागरुक करने और दस्तावेज व्यवस्थित करने का अवसर देने के लिए है। आयोग के कर्मचारियों को कई राज्यों में स्थानीय सहायता भी दी गई है, ताकि वे सही जानकारी जुटा सकें और गलतफहमियों की गुंजाइश कम हो। सरकार का कहना है कि यह मुहिम किसी वर्ग विशेष के खिलाफ नहीं, बल्कि पूरे देश में एक समान ढंग से हो रही है। यह सुधार अभियान जनता के हित में है और इससे लोकतंत्र का ढांचा मजबूत होगा।

होना यह चाहिए

संतुलन, पारदर्शिता और भरोसा

सच यह है कि दोनों पक्षों के तर्क अपनी जगह महत्वपूर्ण हैं। यह प्रक्रिया आवश्यक भी है और इससे जुड़ी आशंकाएं भी वास्तविक हैं। भारत जैसा बड़ा और विविध देश किसी भी प्रशासनिक व्यवस्था के लिए चुनौतीपूर्ण है। इसीलिए जरूरी यह है कि प्रक्रियाएं ऐसी हों जिन पर सभी का विश्वास बना रहे।

• सरकार को तय करना होगा 'गोल्ड स्टैंडर्ड'

मतदाता सूची की शुद्धता पर बार-बार उठने वाले विवादों को खत्म करने के लिए, सरकार और आयोग को मिलकर एक निर्णायक कदम उठाना होगा। नागरिकता और पात्रता के प्रमाण के लिए किसी एक या कुछ 'गोल्ड स्टैंडर्ड' दस्तावेजों को पुख्ता प्रमाण के रूप में कानूनी मान्यता देनी होगी, न कि दस्तावेजों की लंबी सूची पर निर्भर रहना चाहिए। यदि पासपोर्ट या जन्म प्रमाण-पत्र जैसे दस्तावेजों को प्राथमिक प्रमाण माना जाता है, तो इसके साथ ही यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि इन दस्तावेजों को हासिल करने की प्रक्रिया देश के हर नागरिक, खासकर ग्रामीण और गरीब वर्गों के लिए सरल, सुलभ और मुफ्त हो। जब तक हर नागरिक के पास एक ऐसा 'पुख्ता' प्रमाण नहीं होगा, जिसे कोई चुनौती न दे सके, तब तक हर पुनरीक्षण अभियान केवल अविश्वास और कानूनी उलझनों को ही जन्म देता रहेगा। यह स्पष्टता ही लोकतंत्र में भरोसे का आधार बन सकती है।

• राजनीतिक दलों की सक्रिय भागीदारी

मतदाता सूची को शुद्ध करने का काम केवल आयोग का नहीं है। राजनीतिक दलों को अपने बूथ लेवल एजेंट्स (BLA) को सक्रिय रूप से प्रशिक्षित करना चाहिए, ताकि वे डोर-टू-डोर सत्यापन में भाग लें। यदि प्रत्येक दल सक्रिय रूप से सूची की जांच करेगा, तो किसी भी गलत छंटनी या पक्षपात को तुरंत उजागर किया जा सकेगा, जिससे पूरी प्रक्रिया में विश्वास और संतुलन बढ़ेगा।

• पूर्ण पारदर्शिता

आयोग को अपनी पूरी कार्यवाही पारदर्शी बनानी चाहिए। जिन लोगों के नाम सूची से हटाए जाते हैं, उन्हें स्पष्ट कारण लिखित रूप में (फॉर्म 7 का उपयोग) देना जरूरी है। ऐसा कारण सार्वजनिक भी किया जा सकता है, ताकि प्रक्रिया पर संदेह न रहे। साथ ही, नागरिकों को सरल तरीका उपलब्ध कराया जाना चाहिए कि वे अपनी आपत्ति दर्ज करा सकें और सही प्रमाण देने पर उनका नाम तुरंत जोड़ दिया जाए।

• दस्तावेजों में नरमी

दस्तावेजों के मामले में भी आयोग को कठोर रुख नहीं अपनाना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति के पास जन्म प्रमाण- पत्र या भूमि-पत्र नहीं है तो उसके पास आधार कार्ड, राशन कार्ड, निवास शपथ-पत्र या अन्य प्रमाण- पत्र स्वीकार किए जा सकते हैं। नियमों का उद्देश्य नागरिक को परेशान करना नहीं, बल्कि उसके अधिकार की रक्षा करना होना चाहिए।

समय व परिस्थितियां भी ध्यान में रखना जरूरी

- सत्यापन के लिए अवधि का निर्धारण भी राज्य की परिस्थितियों के अनुसार होना चाहिए। बारिश और बाढ़ के दिनों में ग्रामीण क्षेत्रों में घर- घर जाना कठिन होता है, ऐसे माहौल में जल्दबाजी करने से गलतियां बढ़ सकती हैं। यदि प्रत्येक क्षेत्र की परिस्थितियों को देखते हुए समय तय किया जाए तो प्रक्रिया अधिक प्रभावी और सही परिणाम देने वाली सिद्ध होगी।
- लोकतंत्र की मजबूती इसी में है कि पात्र नागरिक का एक भी नाम सूची से बाहर न रहे। इसलिए यह अभियान एक प्रकार की सुधार प्रक्रिया बने, न कि छंटाई का उपकरण। नागरिकों का अधिकार ही सबसे पहले है और इसे सुरक्षित रखना आयोग और सरकार दोनों की जिम्मेदारी है।

भरोसा ही लोकतंत्र का आधार

- सही मायने में कहें तो विशेष गहन पुनरीक्षण-2026 लोकतंत्र को मजबूत बनाने का अवसर भी है और उसके सामने खड़ी चुनौती भी। यदि इसे निष्पक्ष और पारदर्शी ढंग से चलाया गया तो मतदाता सूची अधिक विश्वसनीय बनेगी और जनता का भरोसा बढ़ेगा। लेकिन यदि इसमें जल्दबाजी, असमानता या पक्षपात दिखाई दिया तो यह प्रक्रिया लाभ के बजाय अविश्वास पैदा करेगी। लोकतंत्र केवल नियमों और सूचियों से नहीं चलता, वह चलता है जनता के भरोसे से। उस भरोसे को सुरक्षित रखना ही आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

बढ़ता काम का दबाव, थकान का संकट

मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण के दौरान बीएलओ पर पड़ रहा दबाव अब खबरों में भी साफ दिखाई दे रहा है। दिन भर घर- घर जाकर सत्यापन, दस्तावेज जांच और लगातार लक्ष्यों को पूरा करने की मजबूरी ने कई कर्मचारियों को भारी तनाव में डाल दिया है। कुछ जिलों से तो ऐसे मामलों की सूचना सामने आई है, जहां काम के दबाव और शारीरिक थकान के बीच बीएलओ की मौत तक हो गई। यह स्थिति प्रशासनिक मशीनरी की वह परत उजागर करती है जो अक्सर रिपोर्टों में अनदेखी रह जाती है। लोकतांत्रिक प्रक्रिया का यह महत्वपूर्ण काम तभी सुरक्षित रह सकता है, जब इसे निभाने वाले कर्मचारियों की सेहत और क्षमता का भी समान ध्यान रखा जाए।

पश्चिम बंगाल में भगदड़ का माहौल और बढ़ती बेचैनी

दूसरी ओर पश्चिम बंगाल में हाल की हलचल इस अभियान के सामाजिक असर को दर्शाती है। अवैध रूप से रह रहे लोगों के बीच अचानक भय फैलने लगा है और कई क्षेत्रों में उनके मूल स्थानों की ओर लौटने की कोशिशों से भगदड़ जैसा माहौल बन गया है। स्थानीय स्तरीय अफवाहों और गलत सूचनाओं ने उनकी बेचैनी को और बढ़ा दिया है। यह स्थिति बताती है कि मतदाता सूची की जांच केवल तकनीकी प्रक्रिया नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक प्रभावों से भी घिरी होती है। जहां भी जानकारी अस्पष्ट रहती है वहां अफवाहें हावी हो जाती हैं और सामूहिक घबराहट जैसी स्थितियां जन्म लेती हैं। यह भी आवश्यक है कि प्रशासन इस प्रकार की आशंकाओं को शांत करने के लिए स्पष्ट संवाद और विश्वसनीय जानकारी उपलब्ध कराए।

नीतीश कुमार की दसवीं पारी ने बिहार की सियासत को फिर बदल दिया

बिहार का बाजीगर

बिहार की राजनीति में लगातार बदलते समीकरणों और अविश्वसनीय मोड़ों के बीच नीतीश कुमार ने एक बार फिर अपनी राजनीतिक सूझबूझ का ऐसा प्रदर्शन किया कि विपक्ष ही नहीं सहयोगी दल भी अचंभित रह गए। दसवीं बार मुख्यमंत्री बनने के साथ वे बिहार के सबसे लम्बे समय तक शासन करने वाले नेता के रूप में स्थापित हो गए और राज्य की राजनीति को नई दिशा देने की स्थिति में आ बैठे।

राधा रमण ✍ वरिष्ठ पत्रकार

बाजीगर! जी हां, बाजीगर कहना ही समीचीन होगा। जिसे चुनावी चक्रव्यूह में विपक्षी दलों के अलावा सहयोगी भी अंदरखाने घेरने में जुटे हों और वह सबको चकमा देकर अपनी पार्टी के 101 उम्मीदवारों में से 85 को जिता ले जाए और बिहार के इतिहास में सबसे ज्यादा बार मुख्यमंत्री बनने का रिकार्ड बना जाए तो उसे बाजीगर ही कहेंगे। आप ठीक समझ रहे हैं। हम बात बिहार के 10वीं बार मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने वाले नीतीश कुमार की कर रहे हैं।

बिहार विधानसभा के 20 मई 1952 को अस्तित्व में आने के बाद से 18 बार चुनाव हो चुके हैं। इस दौरान कुल 23 लोगों ने मुख्यमंत्री पद को सुशोभित किया। इनमें 3-3 बार डॉ श्रीकृष्ण सिंह, भोला पासवान शास्त्री और डॉ जगन्नाथ मिश्र और राबड़ी देवी ने मुख्यमंत्री पद की शपथ ली। गौरतलब है कि इनमें डॉ श्रीकृष्ण सिंह अकेले ऐसे नेता रहे जो एक बार शपथ लेने के बाद आजीवन मुख्यमंत्री रहे। भोला पासवान शास्त्री, डॉ जगन्नाथ मिश्र और राबड़ी देवी समय-समय पर मुख्यमंत्री बनते रहे, लेकिन किसी ने अपना कार्यकाल पूरा नहीं किया। कर्पूरी ठाकुर दो बार मुख्यमंत्री बने, लेकिन दोनों शपथ ग्रहण के बीच अंतराल था। वह पहली बार 1970 में महज 163 दिन के लिए और दूसरी बार 1977 में एक साल 301 दिन के लिए मुख्यमंत्री रहे। लालू प्रसाद यादव ने एक बार अपना कार्यकाल पूरा किया, लेकिन बहुचर्चित चारा घोटाले में घिर जाने के बाद उन्हें दूसरे कार्यकाल के बीच ही पद छोड़कर जेल जाना पड़ा। बाकी के मुख्यमंत्रियों दीप नारायण सिंह, विनोदानंद झा, कृष्ण वल्लभ सहाय, महामाया प्रसाद सिन्हा, सतीश प्रसाद सिंह, विन्देश्वरी प्रसाद मंडल, हरिहर सिंह, दारोगा प्रसाद राय, केदार पांडेय, अब्दुल गफूर, रामसुन्दर दास, चंद्रशेखर सिंह, बिन्देश्वरी दूबे, भागवत झा आजाद, सत्येन्द्र नारायण सिन्हा और जीतनराम मांझी का कार्यकाल पांच साल से कम रहा। दीप नारायण सिंह 17 दिन और सतीश प्रसाद सिंह तो महज 5 दिन के लिए मुख्यमंत्री बने। ऐसे में सर्वाधिक दिन तक मुख्यमंत्री रहने का रिकॉर्ड भी नीतीश कुमार के नाम ही है। हालांकि 3 मार्च 2000 को नीतीश कुमार भी महज 7 दिनों के लिए ही मुख्यमंत्री बने थे, लेकिन पांच वर्ष बाद उन्होंने जोरदार वापसी की। फिर 8 साल 177 दिन लगातार मुख्यमंत्री रहे। 2014 में एनडीए से अलग होने के बाद लोकसभा चुनाव में पार्टी की हार की नैतिक जिम्मेदारी लेते हुए उन्होंने इस्तीफा दे दिया और जीतनराम मांझी को मुख्यमंत्री बनाया, लेकिन मन मुताबिक काम नहीं होने के कारण 278 दिन बाद 22 फरवरी 2015 से नीतीश लगातार मुख्यमंत्री हैं। इस दौरान दो बार महागठबंधन के सहयोग से सत्ता की कमान अपने हाथ में रखी। इसीलिए विरोधी उन्हें पलटूराम भी कहते हैं। हालांकि सियासत में पलटूराम सिर्फ नीतीश कुमार ही नहीं हैं। राज्य के उपमुख्यमंत्री सम्राट चौधरी और उनके पिता शकुनी चौधरी समेत कई नेता घाट-घाट का पानी पी चुके हैं। राजनीति में सबकुछ जायज है। चाल, चरित्र और चेहरा का कोई अर्थ नहीं रह गया है। नेता सुविधा के अनुसार सिद्धांत गढ़ते रहते हैं। जनता भी इसका बुरा नहीं मानती है।

नई सरकार, नया आगाज

राज्य में 18वीं विधानसभा के गठन के बाद नई सरकार ने नीतीश कुमार के नेतृत्व में अपना कामकाज संभाल लिया है। नई सरकार में नीतीश के अलावा 26 मंत्री बनाए गए हैं। इनमें सबसे अधिक भाजपा के दो उप मुख्यमंत्रियों समेत 14 मंत्री, जदयू के 8 मंत्री, लोक जनशक्ति पार्टी (रामविलास) के दो मंत्री और हिन्दुस्तान अवाम मोर्चा तथा राष्ट्रीय लोक मोर्चा के 1-1 मंत्री शामिल हैं। मंत्रिमंडल में अभी 10 स्थान खाली रखा गया है, जिसे बाद में आवश्यक होने पर भरा जाएगा।

परिवारवाद से परहेज नहीं

परिवारवाद के खिलाफ अभियान चलाती रही भाजपा और एनडीए के नेताओं ने नई सरकार में जमकर परिवारवाद का पोषण किया है। उप मुख्यमंत्री सम्राट चौधरी पूर्व मंत्री शकुनी चौधरी के पुत्र हैं तो पहली बार मंत्री बनीं श्रेयसी सिंह पूर्व केन्द्रीय मंत्री दिग्विजय सिंह की पुत्री हैं। रमा निषाद पूर्व सांसद अजय निषाद की पत्नी हैं तो संजय सिंह टाइगर पूर्व विधायक धर्मपाल सिंह के भाई हैं। जदयू कोटे से मंत्री बने अशोक चौधरी पूर्व मंत्री महावीर चौधरी के बेटे हैं तो लेसी सिंह समता पार्टी के नेता रहे मधुसूदन सिंह की पत्नी हैं। इसी तरह विजय चौधरी पूर्व विधायक जगदीश प्रसाद चौधरी के पुत्र हैं। मंत्री सुनील कुमार पूर्व मंत्री चन्द्रिका राम के बेटे हैं। जीतनराम मांझी तो परिवारवाद के पुरोधा बन गए हैं। उन्हें आवंटित छह सीटों में से 4 पर उन्होंने अपने परिजनों को चुनाव लड़ा लिया था। एनडीए की सुनामी में चारों– समधिन, बहू, भतीजा और दामाद चुनाव जीत भी गए। उन्होंने अपने कोटे से विधान परिषद् सदस्य बेटे संतोष कुमार सुमन को मंत्री बनाया है। अब बचे राष्ट्रीय लोक मोर्चा के अध्यक्ष उपेन्द्र कुशवाहा। इस बार के चुनाव में उनकी पत्नी स्नेहलता कुशवाहा विधायक बनी हैं। लेकिन उन्होंने अपने बेटे दीपक प्रकाश को अपने कोटे से मंत्री बनाया है। दीपक फिलहाल किसी सदन के सदस्य नहीं हैं। सूत्रों के अनुसार, चुनाव पूर्व हुई डील के मुताबिक दीपक को भविष्य में विधान परिषद् का सदस्य बनाया जाएगा।

भ्रष्टाचार नहीं कोई मुद्दा

विधानसभा चुनाव में लालू यादव के भ्रष्टाचार को लेकर प्रधानमंत्री, गृहमंत्री से लेकर एनडीए के तमाम नेताओं ने जोर-शोर से हमला बोला था। लेकिन जनसुराज के संस्थापक प्रशांत किशोर ने सम्राट चौधरी, दिलीप जायसवाल, मंगल पाण्डेय और अशोक चौधरी पर जो आरोप लगाये थे, उस पर किसी ने कुछ नहीं बोला। यहां तक कि आरोपित नेताओं ने भी मुंह बंद कर लिया। यहां तक कि प्रशांत के आरोपों पर सफाई मांगने वाले पूर्व केन्द्रीय मंत्री राजकुमार सिंह (आर. के. सिंह) को चुनाव परिणाम आते ही भाजपा ने पार्टी से निकाल दिया। अब नीतीश कुमार ने न जाने किस दबाव में आरोपित नेताओं को अपनी कैबिनेट में शामिल कर लिया। यह वही नीतीश हैं, जिन्होंने तेजस्वी पर आरोप लगने मात्र से महागठबंधन से नाता तोड़ लिया था और इस्तीफा दे दिया था। एडीआर की रिपोर्ट के अनुसार राज्य के 12 मंत्रियों पर आपराधिक मामले दर्ज हैं।

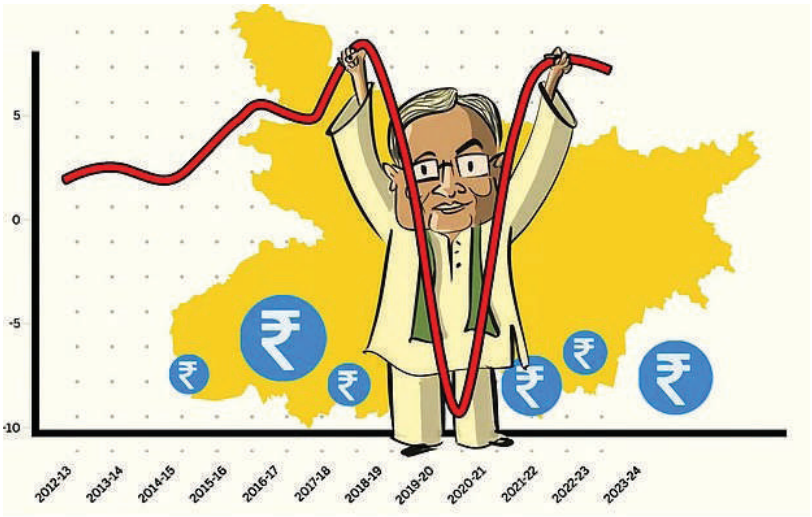

आगे की चुनौतियां... विधानसभा चुनाव के दौरान बिहार सरकार ने जमकर रेवड़ियां बांटी थी। 125 यूनिट मुफ्त बिजली दिया। एक करोड़ महिलाओं के खाते में 10 हजार रुपए डाले। जीविका दीदियों को 10 हजार अलग से दिए। दिहाड़ी मजदूरों को कपड़ा खरीदने के लिए 5 हजार रुपए दिए। रिटायर पत्रकारों का पेंशन 15 हजार कर दिया। वृद्धावस्था पेंशन बढ़ाया। छह माह बाद एक करोड़ महिलाओं को रोजगार के लिए दो-दो लाख कर्ज देने का वादा किया। इससे राज्य के खजाने पर करीब 40 हजार करोड़ का बोझ बढ़ा। बिहार की माली हालत पहले से खराब है। राज्य सरकार को प्रतिदिन करीब 63 करोड़ रुपए ब्याज के देने पड़ते हैं। राज्य का कुल बजट 3 लाख 16 हजार करोड़ का है। ऐसे में नई सरकार के समक्ष चुनौतियां बड़ी हैं। देखना होगा कि सरकार आगे का रास्ता कैसे तय करती है।

अब बात विधानसभा चुनाव की

बिहार की राजनीति पिछले 35 वर्षों से लालू समर्थन और लालू विरोध की धुरी पर केन्द्रित रहती थी। लेकिन इस बार ऐसा नहीं हुआ। इसका श्रेय जनसुराज के संस्थापक प्रशांत किशोर को जाता है। चुनाव की घोषणा से पहले ही प्रशांत किशोर (पीके) ने पलायन, बेरोजगारी, शिक्षा और चिकित्सा पर अपना रोडमैप जारी कर दिया। उन्होंने न सिर्फ इसे मुद्दा बनाया, बल्कि यह भी बताया कि इसे कैसे अमलीजामा पहनाया जा सकता है। नतीजतन, एनडीए, महागठबंधन समेत सभी सियासी दल इसी के इर्दगिर्द घूमते नजर आए। चुनाव परिणाम में भले ही प्रशांत की पार्टी को महज 3.66 प्रतिशत वोट ही मिल पाया, लेकिन बिहार में भविष्य की सियासत के लिए उन्होंने लंबी लकीर खींच दी है। आने वाले समय में इसका असर दिखेगा। प्रशांत की चुनौती ने ही एनडीए के नेताओं को मुफ्त की रेवड़ियां बांटने के लिए विवश कर दिया। जनता जब तक पीके की बातें समझती, तब तक एनडीए के नेताओं ने खैरातों की झड़ी लगा दी। मतदाता उसी में उलझ कर रह गए। निःसंदेह कहा जा सकता है कि सरकार की मुफ्त की रेवड़ियां ही इस चुनाव का गेम चेंजर बनीं।

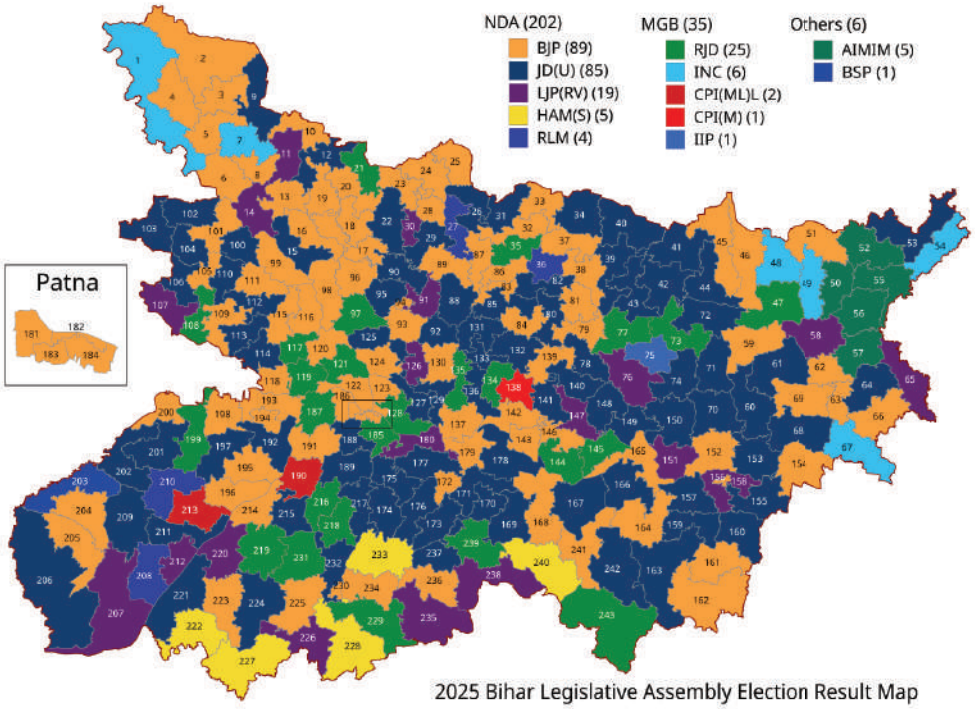

2025 Bihar Legislative Assembly Election Result Map

आने वाले दिन विपक्ष के लिए भारी

एनडीए को मिली प्रचंड जीत ने बिहार में विपक्ष को जमींदोज कर दिया है। अगले पांच साल में राज्यसभा में राजद का कोई नुमाइंदा नहीं बचेगा। फिलहाल राज्यसभा में राजद के पांच सदस्य हैं। इसमें से दो अगले साल अप्रैल में रिटायर हो जाएंगे। राजद को महज 25 सीटें मिली हैं। बिहार से राज्यसभा के सदस्य चुनने के लिए 41 विधायकों की दरकार होती है। महागठबंधन के कुल 35 विधायक हैं। ऐसे में विपक्ष कोई सीट निकालने की हालत में नहीं है। विधान परिषद् की एक सीट महागठबंधन को मिल सकती है। हालांकि राजद अकेले दम पर वह सीट भी निकालने की स्थिति में नहीं है। फिलहाल राबड़ी देवी विधान परिषद् में विपक्ष की नेता हैं। उनका क्या होगा, समय तय करेगा। फिलहाल तो लालू यादव के घर में ही उथल-पुथल चल रहा है। यह आगे और बढ़ेगा। कहां थमेगा, किसी को नहीं मालूम। उधर, मुकदमों के मकड़जाल में उलझे लालू परिवार की मुश्किलें कम होंगी, ऐसा नहीं लगता। बिहार में राजद के बिना महागठबंधन का कोई मतलब नहीं है। बाकी दलों की स्थिति दाल में तड़का सरीखा है। कांग्रेस में कलह है और बाकी दल मौन हैं।

महागठबंधन की हार का कारण

बिहार में महागठबंधन की हार के कई कारण रहे। मसलन, सीट बंटवारे का मसला आखिरी समय तक न सुलझ पाना, टिकट की खुलेआम बिक्री, 11 सीटों पर फ्रेंडली फाइट, ढपोरशंखी घोषणाएं, तालमेल की कमी, चुनाव के दौरान राहुल गांधी का 57 दिन तक गायब होना, अति उत्साह और खुद को विजेता मान लेना प्रमुख है। चुनाव से पहले विकासशील इंसान पार्टी प्रमुख मुकेश सहनी का 60 सीटों पर दावा करना और परिणाम से पहले ही खुद को उपमुख्यमंत्री घोषित कराना मतदाताओं को नागावार गुजरा। तेजस्वी का व्यवहार पूरे चुनाव के दौरान खुद को मोगांबो समझना सरीखा था। उन्होंने हर घर के एक सदस्य को नौकरी देने जैसी कभी न पूरी हो सकने जैसी घोषणाएं कर दी। इससे लोगों का संदेह और बढ़ गया।

जनसुराज का क्या होगा

बिहार की विडंबना है कि पिछले 40 साल से किसी एक पार्टी ने प्रदेश की सभी विधानसभा सीटों पर उम्मीदवार नहीं उतारे हैं। यही कारण है कि दलों का जनाधार सिकुड़ता जा रहा है। 40 साल बाद जनसुराज ने प्रदेश की सभी 243 सीटों पर उम्मीदवार उतारने का दावा किया था। हालांकि उसके एक उम्मीदवार को दानापुर से एनडीए नेताओं ने नामांकन करने से रोक दिया था। तीन उम्मीदवारों को एनडीए के पक्ष में बैठा दिया गया और एक उम्मीदवार का नामांकन तकनीकी कारणों से रद्द हो गया। ऐसे में जनसुराज के 238 उम्मीदवार आखिर तक मैदान में डटे रहे। भले ही इनमें से 233 उम्मीदवारों की जमानत जब्त हो गई। सिर्फ एक जगह मढ़ौरा में जनसुराज का प्रत्याशी दूसरे स्थान पर रहा, लेकिन 35 से ज्यादा सीटों पर जनसुराज के उम्मीदवारों ने एनडीए और महागठबंधन के उमीदवारों की जीत-हार में निर्णायक भूमिका निभाई। पार्टी की करारी हार की जिम्मेदारी प्रशांत किशोर ने अपने ऊपर ली है। उन्होंने कहा कि वह जनता को समझाने में नाकाम रहे। 'हारा जरूर हूं लेकिन मैदान नहीं छोड़ूंगा। आनेवाले पांच साल बिहार में ही रहूंगा। घर-घर घूमूंगा और जनता को जगाता रहूंगा।' जिस दिन नीतीश कुमार और उनके मंत्री पद और गोपनीयता की शपथ ले रहे थे, प्रशांत किशोर अपनी टीम के साथ चंपारण के भितिरहवा स्थित गांधी आश्रम में उपवास और मौन व्रत पर थे। दूसरे दिन उन्होंने दिल्ली के अपने फ़्लैट को छोड़कर अपनी 20 साल की पूरी कमाई जनसुराज को दान करने की घोषणा की। उन्होंने कहा कि अगले पांच साल वह अपने हुनर से जो भी कमाएंगे, उसका 90 प्रतिशत जनसुराज के खाते में जाएगा। उन्होंने बिहार के आम लोगों और जनसुराज समर्थकों से जनसुराज को एक-एक हजार रुपए दान देने की अपील की। इससे भविष्य में उनकी सक्रियता और गंभीरता का पता चलता है। उन्होंने सरकार पर चुनावी घोषणाओं को पूरा करने का दबाव बढ़ा दिया है। बहरहाल, फिलहाल तो सभी को इंतजार ही करना होगा।

सियासत : अंता में हार के बाद राजस्थान में बदले सत्ता और संगठन के समीकरण

जीत-हार ने बदली सियासी फिजां

राजेश कसेरा ✍ वरिष्ठ
पत्रकार एवं राजनीति विश्लेषक

अंता उप चुनाव की हार ने राजस्थान की सियासत को नई दिशा दे दी है। परिणाम ने भाजपा सरकार और संगठन दोनों को यह अहसास करा दिया कि आंतरिक समन्वय और जमीनी पकड़ कमजोर पड़ने पर 2028 की राह मुश्किल हो सकती है। यही कारण है कि हार के तुरंत बाद प्रशासनिक फेरबदल तेज हुए, संगठन की नई टीम बनी और मंत्रिमंडल विस्तार की चर्चा गर्म हुई। अंता का संदेश साफ है कि सत्ता और संगठन को एकजुट कर ही भाजपा राज्य में अपने राजनीतिक संतुलन और भविष्य की रणनीति को मजबूत कर पाएगी।

प्रदेश में अंता उप चुनाव के नतीजों ने भले ही प्रत्यक्ष रूप से भजनलाल शर्मा सरकार पर कोई असर नहीं डाला। लेकिन भाजपा को ये अनुभव जरूर करा दिया कि राजस्थान में सरकार और संगठन को एकजुट करके नहीं रखा गया तो विकसित भारत-2047 के विजन को पूरा करने में अड़चनें आ सकती हैं। यही कारण है कि उप चुनाव में हार के बाद बड़ी प्रशासनिक सर्जरी होना शुरू हो गई तो प्रदेशाध्यक्ष मदन राठौड़ की नई टीम का गठन भी हो गया। जल्द कई और बड़े बदलाव भी प्रदेश की सियासत में देखने को मिलेंगे। ये सब पंचायती राज और स्थानीय निकाय के चुनावों को देखकर भी किए जाएंगे। भजनलाल सरकार के दो साल पूरा होने के बाद सबसे बड़ी चुनौती यही होगी। इसके अलावा कैबिनेट के विस्तार या फेरबदल की संभावनाएं भी बढ़ गई हैं। ऐसा इसलिए बड़े पैमाने पर हो रहा है कि विपक्ष अंता उप चुनाव के दौरान ये बात पहुंचाने में सफल रहा कि सरकार की जनता के बीच पकड़ कमजोर हो रही है। मुख्यमंत्री से लेकर कैबिनेट मंत्रियों पर प्रशासनिक अमला भारी पड़ रहा है और जनता के काम सरकारी फाइलों में ज्यादा घूम रहे हैं। विपक्ष ये संदेश भी आमजन के बीच में लगातार फैलाता जा रहा है कि मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा को हर काम की मंजूरी के लिए दिल्ली का रूख करना पड़ता है। ऐसे में सत्ता और संगठन दोनों ही साल 2028 के विधानसभा चुनाव से पहले मजबूत पाल को बांधने में जुटना चाहते हैं, ताकि हर सियासी तूफानों को झेलकर वे प्रदेश की राजनीति में नया इतिहास रच सकें।

मंत्रिमंडल में फेरबदल जल्द, नए चेहरों को लाने की तैयारी

राजस्थान सरकार में वर्तमान में 24 मंत्री हैं, जबकि अधिकतम 30 मंत्रियों की अनुमति है। ऐसे में छह पद खाली हैं, जिन्हें भरने की तैयारी जोर-शोर से चल रही है। यह फेरबदल क्षेत्रीय, जातीय और संगठनात्मक संतुलन साधने के उद्देश्य से होगा। शेखावाटी, मेवाड़, पूर्वी राजस्थान और आदिवासी क्षेत्रों से नए चेहरों को मौका देने की बात प्रमुखता से उठ रही है। गुर्जर और मेघवाल समुदाय के नेताओं को अधिक प्रतिनिधित्व देने की मांग बढ़ रही है। कालीचरण सराफ, अनिता भदेल, श्रीचंद कृपलानी और पुष्पेंद्र सिंह राणावत जैसे पुराने चेहरे वापसी की कतार में हैं। इसके अलावा जयदीप बिहाणी, हंसराज मीणा, आदूराम मेघवाल और रामविलास मीणा जैसे नए नाम भी तेजी से चर्चाओं में हैं। नए बदलाव में वसुंधरा राजे गुट को साधना भी भाजपा नेतृत्व के लिए महत्वपूर्ण चुनौती है। राजे गुट के नेताओं को मंत्रिमंडल में स्थान देने की रणनीति पर भी मंथन चल रहा है। क्योंकि प्रदेश कार्यकारिणी में भी वसुंधरा खेमे के नेताओं को संगठन में महत्वपूर्ण भूमिकाएं मिली हैं। अगला फेरबदल केवल खाली पद भरने तक सीमित नहीं होगा। कई सुस्त और नॉन परफॉर्मिंग मंत्रियों की छुट्टी तय है। मुख्यमंत्री खुद मंत्रियों के कार्यों का मूल्यांकन कर रहे हैं। राजनीतिक विश्लेषकों से समझें तो राजस्थान में गुजरात मॉडल लागू हो सकता है। वहां सभी मंत्रियों से इस्तीफा लेकर नई और चुस्त टीम बनाई गई। मुख्यमंत्री की हालिया बैठकें और ब्यूरोक्रेसी में हुए व्यापक बदलाव से इस मॉडल के लागू होने के संकेत मिले।

उप चुनाव की हार, कड़ा सबक

उप चुनाव में मिली हार के बाद भाजपा प्रदेश प्रभारी राधामोहन दास अग्रवाल ने कहा कि हार और जीत राजनीतिक जीवन का अहम हिस्सा है। हम बहुत चुनाव जीतते हैं, एक-आध चुनाव कभी-कभी उनको जिताते रहेंगे तो जिंदा तो रहेंगे वो लोग। उनके इस बयान से साफ दिखा कि भाजपा अंता के नतीजे को बड़े राजनीतिक बदलाव के रूप में नहीं देख रही, बल्कि इसे कांग्रेस को जिंदा रखने के एक प्रयास के रूप में पेश कर रही है। लेकिन सच इससे इतर है। राष्ट्रीय नेतृत्व और प्रदेश संगठन ने हार के कारणों का गहराई से विश्लेषण करने की बातें कहीं। पार्टी के जिम्मेदार समझ रहे हैं कि सरकार और संगठन के भीतर सबकुछ ठीक नहीं चल रहा। आंतरिक गुटबाजी और सरकार के 22 महीने के काम के आकलन के रूप में भाजपा ने अंता सीट को गंवा दिया। जबकि जीत के लिए वसुंधरा राजे ने करीब एक सप्ताह तक अंता में डेरा डाला। मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा ने दो रोड शो किए। प्रदेश अध्यक्ष मदन राठौड़ ने तीन बार दौरा कर संगठन की बैठकें तक लीं। हालांकि कुछ बड़ी राजनीतिक चूक का खामियाजा पार्टी को उठाना पड़ा। पूरे चुनाव प्रचार में प्रदेश प्रभारी राधामोहन अग्रवाल का न आना भी बड़े नेताओं में खींचतान होना दिखाता है। हाड़ौती के इस क्षेत्र में कोटा के सांसद और लोकसभा अध्यक्ष ओम बिरला का भी प्रभाव है, लेकिन उनकी कोई भूमिका देखने को नहीं मिली। जबकि बिरला के खिलाफ गत लोकसभा का चुनाव लड़ने वाले कांग्रेस के प्रहलाद गुंजल अंता में सक्रिय रहे।

बड़े सियासी चेहरों का जमीनी सच आया सामने

अंता उप चुनाव के नतीजे ने तीन बड़े चेहरों को सबसे ज्यादा प्रभावित किया। इसमें मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा, पूर्व मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे और पूर्व मुख्यमंत्री अशोक गहलोत शामिल हैं। भाजपा उम्मीदवार मोरपाल सुमन को वसुंधरा राजे की पसंद से उतारा गया था, इसलिए उम्मीदवार की हार का पहला असर उनकी सियासी छवि पर पड़ा। लगातार तीसरी बार इस क्षेत्र से सांसद उनके पुत्र दुष्यंत सिंह को चुनाव का प्रभारी भी बनाया गया था। मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा सरकार के मुखियां हैं, ऐसे में चुनाव से उनकी प्रतिष्ठा सीधे तौर पर प्रभावित हुई। तीसरी जिम्मेदारी प्रदेश अध्यक्ष मदन राठौड़ की रही। जबकि कांग्रेस के लिहाज से देखें तो उनका उम्मीदवार अशोक गहलोत की पसंद का था। ऐसे में परिणाम गहलोत को सीधे तौर पर राजनीतिक लाभ देने वाले हैं। चुनाव में भूमिका निभाने वाले कांग्रेस प्रदेश अध्यक्ष गोविंदसिंह डोटासरा, नेता प्रतिपक्ष टीकाराम जूली, सचिन पायलट के साथ चुनाव प्रबंध देख रहे विधायक अशोक चांदना का भी कद इससे बढ़ा। जहां तक निर्दलीय नरेश मीणा की बात करें तो उन्हें अपेक्षा से ज्यादा वोट मिले। उनका यह तीसरा चुनाव था, जिसे वे हार गए। इससे उनकी व्यक्तिगत क्षति तो हुई ही साथ में पहले दिन चुनाव प्रचार में लगे पूर्व मंत्री राजेंद्र गुढ़ा, आरएलपी सुप्रीमो हनुमान बेनीवाल पर भी इस हार का असर पड़ेगा।

नई ऊर्जा के साथ जनता के बीच उतरने की तैयारी

प्रदेश भाजपा कार्यालय में मंत्रियों की जनसुनवाई

अंता में हार के बाद जनता को अपने प्रति आकर्षित करने के लिए राजस्थान की भजनलाल सरकार जनसुनवाई के जरिए कार्यकर्ताओं और आम जनता की समस्याओं और शिकायतों को सुनकर उनका निराकरण करने की कोशिश में जुट गई है। इसके लिए सरकार की तरफ से एक दिसंबर से जनसुनवाई का कार्यक्रम शुरू किया गया है। इसके चलते सोमवार से बुधवार तक रोज दो-दो मंत्री जयपुर में भाजपा के प्रदेश कार्यालय पर पार्टी के बड़े पदाधिकारियों के साथ जनता के दर्द और परेशानियों को जानने, समझने और हल करने का काम कर रहे हैं। इससे पीछे सत्ता और संगठन को एकजुट करना मकसद है। साथ ही सत्ता में बैठे मंत्रियों का भी पार्टी के पदाधिकारियों और जमीनी कार्यकर्ताओं से सीधा संपर्क व जुड़ाव हो सके। साथ ही जिन लोगों की समस्याओं का निस्तारण हुआ तो वे सरकार के ब्रांड एम्बेसडर के रूप में सकारात्मक प्रभाव अन्य के बीच छोड़ सके। वैसे जनसुनवाई के माध्यम से शिकायतों को दूर करने का काम पहले भी किया गया था, लेकिन चार दिन में ही ये प्रयास रोकना पड़ा था।

अंता उप चुनाव से सबक सीखकर मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा की रणनीति स्पष्ट है कि सरकार, संगठन और प्रशासन तीनों स्तरों पर एक साथ परिवर्तन लाकर जनता और पार्टी कार्यकर्ताओं के बीच यह संदेश दिया जाए कि भाजपा सरकार नई ऊर्जा, नई सोच और नए चेहरों के साथ आगे बढ़ने के लिए तैयार है। नए साल से पहले होने वाले ये बदलाव न केवल राजस्थान की राजनीतिक दिशा तय करेंगे, बल्कि राज्य की प्रशासनिक कार्यप्रणाली और संगठनात्मक ढांचे को भी नई पहचान देने का ऐलान होंगे।

आगामी स्थानीय चुनावों के दृष्टिकोण से यह महा-फेरबदल भाजपा के लिए अहम साबित हो सकता है, क्योंकि इससे जनता के बीच नया नेतृत्व और नई उम्मीदों का संदेश जाएगा, जो 2026 के चुनावी माहौल में निर्णायक भूमिका निभा सकता है। इस कारण से बड़े फैसले तक किए गए। राज्य सरकार ने ब्यूरोक्रेसी में बड़ा फेरबदल करते हुए मुख्य सचिव सुधांशु पंत को केंद्र में भेजने के साथ हुआ। मुख्यमंत्री के बेहद करीबी माने जाने वाले अतिरिक्त मुख्य सचिव (एसीएस) शिखर अग्रवाल को भी सीएमओ से हटाकर उद्योग विभाग में भेज दिया गया। उनकी जगह अखिल अरोड़ा को नया एसीएस (मुख्यमंत्री) नियुक्त किया गया। जानकारों की मानें तो राजस्थान की राजनीति में यह पहला अवसर रहा कि मुख्य सचिव और मुख्यमंत्री के अतिरिक्त मुख्य सचिव दोनों को बदल दिया गया।

सरकार बदलने की परंपरा को रोकना बड़ी चुनौती

सियासत में हर जीत और हार के गहरे मायने होते हैं, जिनके दूरगामी परिणाम भी सामने आते हैं। इस जीत से विपक्षी खेमों को दौड़-भाग करने के लिए ऑक्सीजन मिल गई। वे अगले विधानसभा चुनाव तक भाजपा को मिली हार के जख्मों को कुरेदते रहेंगे। जनता के बीच यह शोर मचाते रहेंगे कि भजनलाल शर्मा सरकार का भरोसा डगमगा रहा है और लिटमस टेस्ट में विफल होने के बाद प्रदेश में नई पर्ची खुल सकती है। हालांकि बीते 11 वर्षों में भाजपा की जिस तरह से संगठन और सरकार के काम करने की शैली रही है उससे स्पष्ट है कि वे हर विफलता से कड़ी सीख लेते हैं। दिसंबर में भजनलाल शर्मा सरकार के दो साल पूरे होने से पहले भाजपा का शीर्ष नेतृत्व जनता के बीच नई ऊर्जा, नए चेहरों और मजबूत टीम के साथ ये सन्देश देना चाहता है कि वे प्रदेश के विकास के लिए कटिबद्ध है। डबल इंजन की सरकार प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के विकसित भारत के सपने को साकार करने के लिए द्रुत गति से आगे बढ़ना चाहती है। साथ ही सत्ता के साथ संगठन को भी मजबूती के साथ धरातल पर उतारना चाहती है जिससे कि राजस्थान में हर पांच साल में सरकार को बदलने की परम्परा टूटे।

अंता की हार भाजपा के लिए बड़ा झटका

ले डूबी आपसी खींचतान

सुरेश व्यास ✍ वरिष्ठ पत्रकार

यह सिर्फ एक हार नहीं, बल्कि बड़ा सियासी संकेत है भाजपा और उसके नेताओं के लिए। इसके दूरगामी परिणाम भी प्रदेश की राजनीति में देखने को मिलेंगे या कहें कि इसका असर अभी से दिखने भी लगा है। चाहे प्रदेश में चल रही मंत्रिमंडल के फेरबदल की कवायद हो या फिर सरकार पर अफसरशाही हावी होने के आरोपों को धोने के लिए बीच कार्यकाल मुख्य सचिव की विदाई हो। ये परिणाम तो नजर आ रहे हैं, लेकिन खुद भाजपा के लिए इस चुनावी हार ने आंतरिक राजनीति में भी नए समीकरणों के उभार के संकेत देने शुरू कर दिए हैं।

राजस्थान में सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी की अंता विधानसभा क्षेत्र के उपचुनाव में बड़े मत अंतर से हार को सामान्य तो नहीं कहा जा सकता। निश्चित तौर पर यह हार भाजपा और प्रदेश की भजनलाल शर्मा सरकार के लिए बड़ा झटका है। वैसे तो चुनावों में हार-जीत एक सामान्य बात है। दो लड़ते हैं तो एक जीतता और दूसरा हारता है, लेकिन अंता का यह उप चुनाव हर मायने में खास था। भले ही यह प्रदेश का एक मात्र उपचुनाव था और पूरी सरकार और भाजपा के पास समग्र ताकत थी कि वह यह चुनाव आसानी से जीत सकती थी, फिर भी हार हुई। इस हार की गहराई में जाने से लगेगा कि यह सिर्फ एक हार नहीं, बल्कि बड़ा सियासी संकेत है भाजपा और उसके नेताओं के लिए। भाजपा के लिए इस चुनावी हार ने आंतरिक राजनीति में भी नए समीकरणों के उभार के संकेत देने शुरू कर दिए हैं।

आमतौर पर माना जाता है कि जिस भी राज्य में कोई विधानसभा उप चुनाव होता है तो यह सत्ताधारी दल के लिए एक तरह से एडवान्टेज है। पिछला इतिहास देखें तो बहुत कम ऐसे मौके नजर आएंगे कि सत्ताधारी दल को विधानसभा क्षेत्र के उपचुनाव में भारी हार का सामना करना पड़ा हो। प्रदेश में दो साल पहले बनी भाजपा सरकार ने पिछले साल ही सात उपचुनाव देखे हैं। इनमें से पांच में भाजपा को जीत हासिल हुई और एक-एक सीट कांग्रेस और बीएपी ने जीती। ये चुनाव विधायकों के सांसद चुने जाने की वजह से हुए थे। उस वक्त भाजपा की इस जीत को काफी अहम माना गया, क्योंकि कुछ महीने पहले ही संसदीय चुनाव में पार्टी हारी थी और बाद में उस संसदीय क्षेत्र की विधानसभा सीट झटके में जीत ली। ऐसे में अंता उपचुनाव के बाद सवाल खड़ा हो रहा है कि आखिर ऐसा क्या हुआ कि भाजपा वहां पहली बार हुआ उपचुनाव जीत नहीं सकी या यूं कहें कि अपनी जीती हुई सीट बरकरार नहीं रख पाई।

अंता में अब तक हुए चार चुनावों में भाजपा-कांग्रेस दो-दो बार जीती है। पहला चुनाव कांग्रेस के प्रमोद जैन भाया ने 2008 में भाजपा के दिग्गज नेता रघुवीर सिंह कौशल को हराया तो 2013 में भाजपा के प्रभुलाल सैनी ने भाया को हराया। वर्ष 2018 के चुनाव में भाया ने सैनी को हराकर गहलोत सरकार में काबिना मंत्री बने। पिछले यानी 2023 के चुनाव में कंवरलाल मीणा ने भाया को हराकर अंता सीट फिर से भाजपा की झोली में डाल दी थी।

इसलिए आई उपचुनाव की नौबत

अंता में अब पहला उपचुनाव हुआ है। कारण रहा एक आपराधिक मामले में तीन साल की सजा के कारण कंवरलाल की विधायकी रद्द होना। कंवरलाल पर साल 2005 के पंचायत राज चुनावों के दौरान उपखंड अधिकारी पर पिस्तौल तानकर धमकी देने और वीडियोग्राफी के दौरान कैसेट तोड़ देने का आरोप था। उन्हें दिसम्बर 2020 में निचली अदालत ने तीन साल की सजा सुनाई। इसे उन्होंने हाईकोर्ट में चुनौती दी। वहां पांच साल केस चला। सजा बरकरार रही। यह फैसला साल की शुरुआत में ही आ गया। कंवरलाल ने सुप्रीम कोर्ट तक राहत के लिए हाथ-पैर मारे, लेकिन फैसला नहीं बदला। ऐसे में इसी साल मई में ही उनकी विधायकी रद्द कर दी गई। तभी से तय था कि यहां विधानसभा उपचुनाव होगा। लेकिन भाजपा की अंदरूनी राजनीति यहीं से शुरू हो जाती है और यही अंता में उप चुनाव होने का एक परोक्ष आधार भी बनती है। कारण कि कंवरलाल प्रदेश की राजनीति से एक तरह से नैपथ्य में भेजी जा चुकी पूर्व मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे के नजदीकी हैं और अंता से पहले वे मनोहर थाना विधानसभा क्षेत्र से 2013 से 2018 तक विधायक रह चुके थे। वसुंधरा राजे चाहती थी कि राज्यपाल के समक्ष दया याचिका पेश कर उनकी सजा में कमी करवा दी जाए, ताकि उपचुनाव की नौबत नहीं आए। बताते हैं कि उन्होंने दिल्ली तक प्रयास किए। इसके बाद जब राज्य सरकार को इस सम्बन्ध में हरी झंडी मिली तो पत्रावली को राजभवन पहुंचाने में ही देरी हो गई और चुनाव आयोग ने बिहार विधानसभा चुनावों के साथ ही अंता में भी उपचुनाव करवाने की घोषणा कर दी। बताया जाता है कि जिस दिन पत्रावली राजभवन जाने वाली थी, उस दिन महज तीन घंटे की देरी ने उपचुनाव की नौबत ला दी।

हारे भी बुरी तरह से

उप चुनाव के प्रचार के दौरान वसुंधरा पूरे हफ्ते अंता निर्वाचन क्षेत्र में रही। खुद मुख्यमंत्री भजनलाल व प्रदेशाध्यक्ष मदन राठौड़ ने भी खूब प्रचार किया। भीड़ भी खूब उमड़ी। मतदान भी जमकर हुआ। प्रचार में ऊपरी तौर पर तो एकजुटता दिखी, लेकिन अंदरखाने गांठ पड़ी हुई थी। प्रचार में लगे एक प्रांतीय नेता ने मतदान से ठीक दो दिन पहले कहा कि सब कुछ इस पर निर्भर है कि नरेश कितने वोट ले जाता है। नतीजा आया तो एक तरह से चौंकाने वाला इसलिए भी था कि भाजपा प्रत्याशी मोरपाल सुमन मतगणना के 15वें राउंड तक तीसरे स्थान पर रहे। इसके बाद बढ़त बनाई, लेकिन उनमें व तीसरे स्थान पर रहे नरेश मीणा के बीच महज 126 मतों का फासला रहा और नरेश मीणा 50 हजार वोट ले गए। जाहिर है उन्होंने कांग्रेस से ज्यादा भाजपा को नुकसान पहुंचाया।

कांग्रेस के प्रमोद जैन भाया 15 हजार से अधिक मतों से जीतने के बाद विधानसभा सदस्यता की शपथ ले चुके हैं, लेकिन भाजपा अब भी सदमे में हैं। स्थानीय पत्रकार धीरेंद्र राहुल कहते हैं कि यहां से भाजपा जीतती भी कैसे। चुनाव घोषित होने तक क्षेत्र के अधूरे पड़े कामों की सुध नहीं ली गई, जबकि भाया के कार्यकाल में काफी काम शुरू हुए थे, उन्हें भी पूरा नहीं करवाया जा सका। इससे भाया के प्रति माहौल बन गया और वे आसानी से चुनाव जीत गए।

एक-दूजे को घेरने का दांव

उपचुनाव की घोषणा के साथ ही भाजपा की अंदरूनी राजनीति भी सामने आने लगी। कांग्रेस ने को बिना देरी किए प्रमोद जैन भाया को अपना प्रत्याशी घोषित कर दिया, लेकिन भाजपा आखिर तक उलझी नजर आई। अंता चूंकि वसुंधरा राजे की राजनीतिक कर्मभूमि बारां-झालावाड़ संसदीय क्षेत्र का हिस्सा है और यहां से वसुंधरा के पुत्र दुष्यंत सिंह लगातार पांचवी बार सांसद हैं। इस नाते वसुंधरा पिछले चुनाव में कंवरलाल को झालावाड़ के मनोहर थाना क्षेत्र से अंता लाकर भी जिता ले गई। चूंकि वसुंधरा दया याचिका समय पर राजभवन नहीं पहुंचा पाने के कारण सरकार से नाराज तो थी ही, इसलिए उन्होंने प्रत्याशी चयन के लिए पूछे जाने तक कोई राय नहीं दी। फिर पूछा गया तो उन्होंने कंवरलाल की पत्नी का नाम सुझा दिया, जो परिवारवाद के आरोप लगने की आशंका से आगे नहीं बढ़ पाया। जानकारों का कहना है कि मुख्यमंत्री भजनलाल और प्रदेशाध्यक्ष मदन राठौड़ यहां से पूर्व मंत्री प्रभुलाल सैनी को ही उतारने के पक्षधर थे। सैनी पिछला चुनाव बूंदी जिले की हिंडौली विधानसभा सीट से कांग्रेस के अशोक चांदना के सामने हार चुके थे। अंता में उन्हें बाहरी प्रत्याशी बताए जाने का डर भी था। फिर भी सैनी के नाम को आगे बढ़ाया गया, लेकिन वसुंधरा स्थानीय प्रत्याशी के पक्ष में थी। उन्होंने यह कहते हुए खुद को विवाद से दूर करने की कोशिश भी की कि प्रत्याशी मुख्यमंत्री व प्रदेशाध्यक्ष चुनेंगे। आखिर बारां के साधारण कार्यकर्ता मोरपाल सुमन को मैदान में उतारा गया। सांसद दुष्यंत को चुनाव प्रभारी बना दिया गया। समिति में अधिकांश सदस्य भी वसुंधरा समर्थक ही रखे गए, लेकिन क्षेत्र में प्रभाव रखने वाले छबड़ा विधायक प्रतापसिंह सिंघवी, कृषि मंत्री किरोड़ीलाल मीणा, शिक्षा मंत्री मदन दिलावर व ऊर्जा मंत्री हीरालाल नागर जैसे नेताओं को दूर रखा गया, जबकि कांग्रेस से बागी हुए नरेश मीणा ने कड़ी चुनौती देते हुए चुनाव को त्रिकोणीय बना दिया था। वसुंधरा कई दिनों तक प्रचार के लिए नहीं पहुंची। दुष्यंत व अन्य नेता प्रचार में पूरी तरह लगे रहे, यहीं से लगने लगा था कि यह अंदरूनी राजनीति का नतीजा है, ताकि चुनाव हारे तो वसुंधरा को अपने इलाके में ही कमजोर साबित किया जा सके।

अब वसुंधरा बनाम भजनलाल

भाजपा के एक सांसद नाम न छापने की शर्त पर कहते हैं कि अंता उप चुनाव में पार्टी की एकजुटता दिखी तो सही, लेकिन नतीजे में नहीं बदल सकी। हालांकि इस हार से भाजपा सरकार की सेहत पर असर नहीं पड़ेगा, लेकिन इसने विपक्ष के उस नैरेटिव को मजबूत कर दिया है कि भजनलाल सरकार जनापेक्षाओं पर खरी नहीं उतर रही। सरकार दो साल के कार्यकाल में भी गुड गवर्नेंस के मामले में नाकाम रही है। वे मानते हैं कि इसका सियासी असर कई दिनों तक दिखाई देगा। राजनीतिक विश्लेषक मानते हैं कि पिछली बार जब उपचुनाव हुए तो मुख्यमंत्री नहीं बनाए जाने से कथित तौर पर नाराज वसुंधरा एक तरह से अपने तक की ही सीमित रही, लेकिन हाल के दिनों में जब से वे सक्रिय हुई तो मौजूदा नेतृत्व इससे असहज है। एक धड़ा अंता की हार के बहाने वसुंधरा को घेरने की कोशिश में है कि वे अपने इलाके से भी भाजपा को एक

विधानसभा चुनाव नहीं जिता पाई तो वसुंधरा खेमा इस उपचुनाव के बहाने भजनलाल सरकार को लिटमस टैस्ट में विफल बताने में जुटा है। अब बेहतर सत्ता संतुलन ही स्थिति को सम्भाल सकता है, वरना वसुंधरा के मुकाबले राजनीति में कम अनुभवी भजनलाल शर्मा की चुनौतियां कम नहीं होंगी। हालांकि सत्ता संतुलन की कोशिश शुरू हो गई हैं, लेकिन इसका क्या असर होता है आने वाला वक्त ही बताएगा।

अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप और हमारे राष्ट्रीय बालक में समानताएं हैरान कर देने वाली हैं...

ब्रह्मांडीय फैक्ट्री के दो महान ब्रांड

हरीश मलिक वरिष्ठ व्यंग्यकार और स्तंभकार

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप और हमारे राष्ट्रीय बालक, राजनीति के ये दो महापुरुष मानो एक ही ब्रह्मांडीय फैक्ट्री में बने हैं। बस लेबल अलग-अलग ब्रांड यानि देश के चिपका दिए गए हैं। दोनों की राजनीतिक यात्राएं ऐसे लगती हैं, जैसे किसी दैवीय शक्ति ने दुनिया को हंसाने-मुस्कुराने के ढेर सारे अवसर देने के लिए खास स्क्रिप्ट लिखी हो। राजनीति के ये दो चमकते हुए सितारे नहीं, बल्कि दो ऐसे टूटते तारे हैं, जिनको देखकर लोग दुआ नहीं, बल्कि मनोरंजन की उम्मीद करते हैं। राजनीति में इनका प्रवेश भी ऐसा है, जैसे कोई स्कूल का जिद्दी बच्चा गलती से प्रिंसिपल के ऑफिस में घुस जाए। उसे पता नहीं होता कि वहां क्या करना है? लेकिन उसमें बकलोल करने का आत्मविश्वास कूट-कूटकर भरा होता है।

यह दोनों विभूतियां पूरी तरह C... हैं, यानि Commendable सराहनीय/सम्मान योग्य! शायद इसीलिए दोनों की सूई हमेशा 'C' पर अटक जाती है। ट्रंप हर कुछ दिनों में भारत-पाक के बीच C यानि सीजफायर कराने की अपनी काल्पनिक महानता की याद दिलाते रहते हैं। ऐसा लगता है कि वे व्हाइट हाउस नहीं, बल्कि अपनी इमेजिनेशन का हॉलीवुड स्टूडियो चला रहे हैं। दूसरी ओर यहां राष्ट्रीय बालक अपनी विश्व-प्रसिद्ध C यानी चौकीदार, चोर और अब चोरी की कथा के पार्ट-1, पार्ट-2, पार्ट-3 जारी करते रहते हैं। मानिए कि वे राजनीति नहीं कर रहे, बल्कि नेटफ्लिक्स की 'सी' सीरीज पर काम कर रहे हैं।

इन दोनों में अद्भुत समानता यह है कि जब भी वे अपने-अपने महावाक्य बोलते हैं, तो उनके आसपास मौजूद हवाएं भी कभी व्यंग्य से मुस्कुरा देती हैं तो कभी संकोच से सरगोशी करने लगती हैं। फर्क सिर्फ इतना है कि ट्रंप की बातें सुनकर अमेरिका के साथ पूरी दुनिया हक्की-बक्की रह जाती है। पुतिन से लेकर शी जिनपिंग तक की आंखों में हंसी के लट्टू जलने-बुझने लगते हैं। और इधर हमारे राष्ट्रीय बालक की बातें सुनकर भारत का चुनाव आयोग मजाकिया अंदाज में हाई स्कूल के हेड मास्टर साहब की तरह कहता है- "युवराज, पहले पॉलिटिक्स की पहली कक्षा की कॉपी खोलो, हम समझाते हैं कि राजनीति कैसे करते हैं। हम तुम्हें वोट चोरी का इतिहास भी पढ़ाएंगे।"

शांति के नोबेल से चूक जाने के बावजूद ट्रंप बार-बार भारत-पाक सीजफायर करवाने का दावा ऐसे करते हैं, जैसे दुनिया के झगड़े सुलझाना उनकी पर्सनल हॉबी हो। या फिर भारत-पाक ने ही उन्हें इसके लिए ठेके पर रखा हो। डोनाल्ड डक-डक करते युद्धविराम को इतने हल्के अंदाज में लेते हैं, मानो वे कह रहे हों..., "आज मौसम बहुत अच्छा है, चलो एक और सीजफायर करवाते हैं!" उधर अपने राष्ट्रीय बालक भी चुनाव प्रक्रिया के शुरू होने पहले ही अपने पसंदीदा आरोप लगाने शुरू कर देते हैं। उनका तो जीवन का उद्देश्य ही यही है कि हर बार नया आरोप लॉन्च करो। जैसे टेक कंपनियां एक ही मशीनरी में मामूली हेर-फेर करके नया मॉडल लॉन्च कर देती है। बस फर्क इतना-सा है कि टेक कंपनियां पता लगते ही गलती तत्काल सुधारती हैं, और अपने बालक हर बार पिछली गलत लाइन का रिहर्सल दोहराते रहते हैं।

आप यकीन मानिए, डोनाल्ड और अपने राष्ट्रीय बालक दोनों में समानता इतनी गहरी है कि दोनों का राजनीतिक डीएनए टेस्ट भी एक-जैसा ही है। सभी जानते हैं कि ट्रंप उस 'अमेरिका को बचाने' निकले हैं, जिसकी इकोनॉमी दुनिया में नंबर वन है! इधर अपने राष्ट्रीय बालक उस 'लोकतंत्र को बचाने' निकले हैं, जिसके जनतंत्र का डंका दुनियाभर में गुंजायमान हो रहा है! दोनों जी-तोड़ मेहनत कर अपने-अपने लक्ष्य को बचाने में जुटे हैं। यह अलग बात है कि दोनों ही खुद को दुनियावालों की हंसी से बचाना भूल गए हैं। दोनों का ही नतीजा एक जैसा है। ट्रंप को अमेरिका के कोर्ट ने आईना दिखाते हुए कहा है कि "भाई, अपनी हद में ही रहो।" दूसरी ओर अपने राष्ट्रीय बालक चुनाव आयोग ने समझाया कि "बेटा, यह राजनीति है, तुम्हारा टेक प्रोजेक्ट नहीं कि हर बार एक ही प्रयोग दोहराओ।"

वर्तमान में इन दोनों की हालत भी कमोबेश एक जैसी ही है। जैसे परीक्षा में फेल होने के बाद की बच्चा कहता है- "पेपर गलत था, सवाल ही गलत थे। टीचर मिला हुआ है। दुनिया गलत है, बस मैं सही हूं!" लेकिन असली मजे की बात तो यह है कि उन्हें अहसास ही नहीं है कि कल्पना-लोक की उनकी कथाएं सिर्फ उन्हीं के प्रशंसकों की व्हाट्सऐप यूनिवर्स में सच मानी जा रही हैं। बाकि यूनिवर्स में उनकी छवि मनोरंजक और हास्यास्पद बन रही है। अब दोनों मिलकर वैश्विक राजनीति के 'कॉमेडी यूनिवर्स' का एक ऐसा अध्याय बन चुके हैं, जिसे पढ़कर-सुनकर जनता कभी हंसती है, कभी मनोरंजन करती है। कभी माथा पकड़ लेती है। पर हां, दोनों को भूलती कभी नहीं है।

अब देखिए, ट्रंप दादा की तो चिंता तो अमेरिका ही करे। अपुन को तो अपने राष्ट्रीय बालक की फिक्र है। बाल दिवस के पुनीत दिन (14 नवंबर) राष्ट्रीय बालक को अपसेट कर देने के अपराध में चुनाव आयोग को क्षमा-याचना करनी चाहिए! उनका दुःख यही है कि मतगणना मशीनें जानबूझकर गलत गिनती करती हैं। सिर्फ उन्हीं सीटों पर जहां उनके दल को हार मिलती है। बालक का मानना है कि मतदान तो बस एक औपचारिकता है। लोकतंत्र में भावनाएं ही सर्वोच्च होती हैं। आयोग ने बिहार में उनकी भावनाओं और पार्टी का कचूमर निकाल दिया है। बेचारा लोकतंत्र भी सोच में पड़ गया है कि वह किसकी सुने? वह कभी किसी की जीत का गवाह बनकर कटघरे में खड़ा हो जाता है, तो कभी किसी की हार के बाद दोषी। वोट चोरी के पुराने राग की तीन ताल बार-बार सुनाई दे रही है और अगले साल के चुनावों से पहले भी एसआईआर के कारण सुनाई देने वाली है। अजब-गजब यह भी है कि वोट चोरी का पुराना राग इतनी बार बज चुका है कि अब उसकी तीन-ताल भी थक कर कुर्सी मांग रही है!

चलते-चलते... फरीदाबाद में आतंकी डॉक्टर के पास जब AK-47 बरामद हुई तो उसने इसे "मेडिकल इक्विपमेंट" बता दिया।
उसका तर्क था कि जो मरीज एनेस्थीसिया से बेहोश नहीं होते, वो AK-47 देखकर मारे डर के बेहोश हो जाते हैं। यह पढ़ाई हमने पाकिस्तान की दाऊद इब्राहीम मेडिकल एंड टेक्नोलॉजी यूनिवर्सिटी में की है। वहां MBBS का मतलब है- Murder, Blasts, Bombing & Suicide.

भारत में पुतिन : बदलती विश्व राजनीति का नया संकेत

दबाव, भरोसा और भारतीय संतुलन

दिसंबर में व्लादिमीर पुतिन की भारत यात्रा केवल एक औपचारिक कूटनीतिक घटना नहीं, बल्कि बदलती वैश्विक राजनीति में भारत की उभरती भूमिका का महत्वपूर्ण संकेत है। अमेरिका के दबाव, यूरोप की ऊर्जा संकट और रूस–चीन समीकरण के बीच भारत अपनी रणनीतिक स्वतंत्रता, ऊर्जा सुरक्षा और रक्षा साझेदारी को नए ढंग से परिभाषित कर रहा है। यह यात्रा भारत–रूस संबंधों के आने वाले दशक की दिशा तय कर सकती है।

संजीव पांडेय
वरिष्ठ पत्रकार

दिसंबर में रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन भारत आ रहे हैं। यह दौरा इसलिए खास है क्योंकि पूरी दुनिया, विशेषकर अमेरिका, इस मुलाक़ात पर अपनी निगाहें टिकाए हुए है। पुतिन ऐसे समय भारत पहुंच रहे हैं जब अमेरिकी दबाव के चलते भारत ने रूसी तेल आयात में कटौती शुरू की है, और अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप यह दावा कर चुके हैं कि भारत जल्द ही रूस से तेल खरीदना पूरी तरह बंद कर देगा। बावजूद इसके, रूस के सर्वोच्च नेता का भारत आना इस बात का संकेत है कि वैश्विक दबावों के बीच भी भारत रूस के साथ अपनी रणनीतिक साझेदारी को कमजोर नहीं पड़ने देना चाहता।

क्यों महत्वपूर्ण है पुतिन का यह दौरा? दरअसल यूक्रेन युद्ध ने वैश्विक राजनीति की दिशा बदल दी है। अमेरिका लगातार भारत पर यह दबाव बनाता रहा है कि वह रूस से तेल और हथियारों की खरीद कम करे। इसके बावजूद दोनों देशों के बीच पिछले दो वर्षों में व्यापार रिकॉर्ड स्तर तक पहुंच गया। 2023–24 में भारत–रूस द्विपक्षीय व्यापार 68.7 अरब डॉलर रहा, जिसमें भारतीय निर्यात मात्र 4.88 अरब डॉलर था, जबकि अधिकांश हिस्सा रूस से सस्ते तेल के आयात का था। भारत के लिए यह यात्रा इसलिए अहम है क्योंकि पुतिन और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के बीच होने वाली वार्ता केवल औपचारिकता नहीं होगी। दोनों नेता रक्षा सहयोग, ऊर्जा साझेदारी, भुगतान प्रणाली, व्यापार संतुलन, और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर साझा चुनौतियों पर गहन बातचीत कर सकते हैं।

अमेरिकी दबाव में इस समय फंसे भारत की रणनीतिक कदम महत्वपूर्ण होंगे। अमेरिका भारत के रूसी हथियार खरीद और तेल आयात से नाराज है। ट्रंप प्रशासन ने भारतीय निर्यात पर 50% टैरिफ लगाकर दबाव बढ़ाया, जिससे भारत के टेक्सटाइल्स और इंजीनियरिंग सेक्टर को भारी नुकसान हुआ। बताया जाता है कि इससे भारत का अमेरिकी बाजार में निर्यात 9–10% तक घट गया और हजारों लोगों की नौकरियां खतरे में पड़ीं। तुलना करें तो चीन रूस से तेल खरीदने को लेकर कभी अमेरिकी दबाव के आगे नहीं झुका। चीन आज भी रूस का सबसे बड़ा तेल खरीदार है और उसने यूक्रेन युद्ध के बाद भी रूस से व्यापार कम नहीं किया। दूसरी ओर भारत को अमेरिकी आर्थिक प्रतिबंधों और टैरिफ का सीधा असर झेलना पड़ा।

भारत-रूस संबंध से अमेरिका खुश नहीं

भारत–रूस संबंध भारत–अमेरिका व्यापार डील में एक महत्वपूर्ण बाधा बनकर उभरा हैं। वाशिंगटन चाहता है कि भारत रूस से तेल और हथियारों की निर्भरता कम करे, ताकि अमेरिका के साथ रणनीतिक और आर्थिक साझेदारी को और गहरा किया जा सके। लेकिन भारत की ऊर्जा सुरक्षा और रक्षा क्षमता अभी भी भारत को मजबूर करती है कि रूस से संबंधों को मजबूत रखे। दूसरी तरफ अमेरिका भारत से अपेक्षाएं तो रखता है, परन्तु भारत की अनिवार्य जरूरतों की तरफ उसका ध्यान नहीं है। परिणामस्वरूप, अमेरिकी प्रशासन समय–समय पर उच्च टैरिफ, व्यापारिक दबाव और कूटनीतिक संकेतों के जरिए भारत पर रूस से दूरी बनाने का संदेश दे रहा है। इसलिए भारत–अमेरिका व्यापार समझौतों की रफ्तार कई बार भारत–रूस की रणनीतिक साझेदारी के कारण धीमी हो रही है।

तमाम उतार चढ़ाव के बीच भारत और रूस के बीच रक्षा संबंध पिछले पचास सालों से सफलतापूर्वक अच्छे बने हुए हैं। रूस–भारत रक्षा संबंध भविष्य के लिए भी निर्णायक है, क्योंकि भारत की रक्षा जरूरतें बढ़ेगी। भारत और रूस का रक्षा सहयोग दशकों पुराना है। भारत का 60–70% सैन्य हार्डवेयर रूस या सोवियत मूल के हैं, जिसमें टैंक, मिसाइलें, लड़ाकू विमान, पनडुब्बियां और स्पेयर पार्ट्स शामिल हैं। ऐसे में रूस से दूरी तत्काल संभव नहीं है। दिसंबर की बैठक में संभावना है कि पुतिन–मोदी बैठक में रक्षा मुद्दों पर बातचीत होगी। 5वीं पीढ़ी के लड़ाकू विमान पर सहमति बन सकती है। चीन–पाकिस्तान संयुक्त रूप से जेएफ–17 और अन्य प्लेटफॉर्म विकसित कर रहे हैं। भारत को अपने वायुसेना की आधुनिक जरूरतें पूरी करने के लिए रूस के साथ संयुक्त विकास जरूरी है। रूस ने रक्षा उत्पादन और स्पेयर पार्ट्स के विकास के लिए 'मेक इन इंडिया' के तहत कई महत्वपूर्ण तकनीकें देने का संकेत पहले भी दिया है। ब्रहमोस, टी-90 टैंक, और सुखोई–30 इसका उदाहरण हैं। रूस भारत के साथ भविष्य में लॉजिस्टिक्स और साझा ट्रैनिंग, आर्कटिक क्षेत्र में सहयोग, नौसैनिक अभ्यास और हिंद महासागर में सुरक्षा साझेदारी को तैयार है औऱ पुतिन के दौरे में ये मुद्दे शामिल हो सकते हैं।

एक भरोसेमंद विकल्प है रूस

■ हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि रूस भारत की ऊर्जा सुरक्षा का आधार है। भारत अपनी 80% से अधिक ऊर्जा जरूरतें आयात करता है। रूस से सस्ते तेल ने भारत का अरबों डॉलर का आयात बिल कम किया। रूस ने भारत को तीन बड़े लाभ दिए हैं। वैश्विक बाजार की तुलना में 20–30% सस्ता तेल दिए, लंबी अवधि के क्रेडिट विकल्प दिए और वैकल्पिक भुगतान व्यवस्था का इंतजाम किया, जिससे डॉलर प्रतिबंधों का असर कम हुआ। इसी से भारत को राहत मिली, क्योंकि मध्यपूर्व में युद्ध, ईरान–सऊदी तनाव और इज़रायल–गाज़ा संकट ने वैश्विक तेल सप्लाई को अस्थिर कर दिया है। रूस इस अनिश्चितता के बीच भारत के लिए एक भरोसेमंद विकल्प बनकर उभरा है।

■ दरअसल यूरोप की मुश्किलें और अमेरिकी हित आपस में टकरा रहे हैं। रूस पर लगे पश्चिमी प्रतिबंधों के दुष्प्रभाव यूरोप ने सबसे ज्यादा झेले। यूरोप का 40–45% गैस रूस से आता था। प्रतिबंधों से यूरोप में तेल–गैस महंगे हो गए, उद्योगों की लागत बढ़ी और महंगाई चरम पर पहुंची। वहीं अमेरिका की जनता पर इसका सीधा असर कम पड़ा, लेकिन अमेरिकी तेल कंपनियों के हित प्रभावित हुए, क्योंकि उनके रूस की कंपनी रोसनेफ्ट में बड़े निवेश थे। यहीं से अमेरिका–रूस–भारत त्रिकोणीय तनाव भी पैदा हुआ। इधर रूस के महत्वपूर्ण सहयोगी चीन और भारत के बीच संबंध अच्छे नहीं है। इसलिए यह देखने वाली बात है कि भारत–रूस–चीन त्रिकोण क्या नई भू–राजनीति विकसित करेगी, क्योंकि चीन से भारत के संबंध अभी अच्छे नहीं हुए हैं। भारत और चीन दोनों रूस के बड़े ऊर्जा खरीदार हैं, लेकिन दोनों की नीतियों में बड़ा अंतर है। चीन ने रूस से दूरी नहीं बनाई। चीन ने रूस से व्यापार बढ़ाया। लेकिन भारत अमेरिकी दबाव में तेल खरीद कम करने लगा। भारत रूस का सुरक्षा साझेदार है। भारत के कम्युनिस्ट ब्लॉक में न रहने के बावजूद भारत को रूस ने मदद की। दूसरी तरफ चीन और रूस के बीच संबंध उतार चढ़ाव वाले रहे। माओ के समय रूस और चीन के संबंध बहुत अच्छे नहीं थे। लेकिन बाद में चीन-रूस संबंध अच्छे हो गए। चीन रूस का आर्थिक साझेदार बन गया। इस आर्थिक साझेदारी पर भारत ने गहनता से विचार नहीं किया। चीन और रूस के बीच आर्थिक संतुलन भारत के लिए चुनौतीपूर्ण है, क्योंकि भारत को एक साथ सुरक्षा, अर्थव्यवस्था और कूटनीति तीनों संभालनी हैं।

व्यापार संतुलन सुधारने के नए रास्ते खुलना संभव

पुतिन के भारत दौरे से कई संभावित लाभ भारत को मिल सकते हैं। व्यापार संतुलन सुधारने के नए रास्ते खुल सकते हैं। भारत के लिए फार्मा, आईटी, कृषि, हीरा उद्योग, और ऑटो–पुर्जों में भारत के लिए बड़े अवसर खुल सकते हैं। ऊर्जा कूटनीति में नई समझौते हो सकते हैं। एलएनजी, कोयला, आर्कटिक ऊर्जा परियोजनाओं में भारत नई हिस्सेदारी पर वार्ता कर सकता है। रक्षा सहयोग का उन्नत संस्करण पर विचार हो सकता है। नए हथियार प्लेटफॉर्म, स्पेयर पार्ट्स लोकलाइजेशन और संयुक्त उत्पादन योजनाओं का ऐलान संभव है। भुगतान प्रणाली पर नई सहमति बन सकती है। डॉलर–निर्भरता कम करने के लिए रुपये–रूबल व्यापार या डिजिटल भुगतान समाधान पर बात आगे बढ़ सकती है। मीडिया–सहयोग भी बढ़ सकता है। रूस का चैनल आरटी का भारत के लिए नया चैनल लॉन्च करने वाला है और इससे दोनों देशों की कोमल कूटनीति को मजबूत करेगा।

पुतिन की यात्रा कई मायनों में महत्वपूर्ण

पुतिन की भारत यात्रा केवल द्विपक्षीय संबंधों की औपचारिकता नहीं है। वहीं एक सच्चाई यह है कि भारत-रूस गहन संबंध भारत-अमेरिका व्यापार समझौते में एक बड़ी बाधा है। यह वैश्विक ताकतों के बीच भारत के बढ़ते महत्व, ऊर्जा सुरक्षा, रणनीतिक साझेदारी और बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में भारत की भूमिका का संकेत है। अमेरिकी दबाव, चीन की बढ़ती उपस्थिति, यूरोप की ऊर्जा चुनौतियां और मध्यपूर्व की अस्थिरता, इन सभी के बीच भारत को अपने हितों की रक्षा करते हुए संतुलित विदेश नीति अपनानी है। पुतिन का यह दौरा उसी संतुलन को साधने का भारत का एक महत्वपूर्ण प्रयास है। यह यात्रा आने वाले वर्षों में भारत–रूस संबंधों को नई दिशा दे सकती है और भारत की ऊर्जा एवं सुरक्षा रणनीति में निर्णायक मोड़ आ सकती है।

सिविल लाइंस में तेंदुए की शाही सैर

जयपुर के सिविल लाइंस क्षेत्र में तेंदुए की शाही सैर ने बता दिया कि असली वीआईपी मूवमेंट किसे कहते हैं। बेचारा सुरक्षा तंत्र सोच में पड़ गया। यह किस नेता के रूट से भी तेज़ निकल गया! तेंदुआ पहले एक बंगले में घुसा, फिर दूसरे में और यह संयोग भी कम मज़ेदार नहीं कि उसके कदम सीधे सुरेशसिंह रावत के सरकारी आवास से होते हुए सचिन पायलट के घर के सामने तक पहुंच गए। लग रहा था जैसे कह रहा हो, "दोनों बड़े नेता हैं, पर असली 'फुटवर्क' मेरा है!" रावत के बंगले में झांककर शायद उसने सोचा "जल संसाधन मंत्री के यहां पानी है कि नहीं?"

और पायलट के घर के सामने पहुंचकर बोला होगा, "मैं भी उड़ान भरने आया हूं, लेकिन बिना हेलिकॉप्टर के।" अधिकारियों ने इसे पकड़ने की कोशिश ऐसी की जैसे यह कोई साधारण जानवर नहीं, बल्कि दल-बदल की राजनीति का नया संदेशवाहक हो। आख़िर में तेंदुए ने दिखा दिया, सुरेश रावत हों या सचिन पायलट, सिविल लाइंस का असली अनघोषित सुपरस्टार वही है, जो बिना सिक्योरिटी पास के वीआईपी लेन में चहलकदमी कर जाता है!

मंत्री जी बने खाद निरीक्षक

राजस्थान के कृषि मंत्री इन दिनों खुद छापे मार रहे हैं। जैसे विभाग नहीं, सुपरहिट सीरीज चला रहे हों, "खाद का खलनायक कौन?" वे खेत-खलिहानों में पहुंचते हैं, गोदामों के ताले तोड़ते हैं, और अफसरों की आंखों से नींद चुरा लेते हैं। जो कर्मचारी बरसों से "गुणवत्ता" की रक्षा कर रहे थे, शायद वे खाद में नहीं, फाइलों में मिलावट जांचते रहे! अब मंत्रीजी खुद हर बोरिया सूंघ रहे हैं, कहीं असली काम की गंध मिले तो सही। लगता है, पूरे कृषि विभाग की उपज अब एक ही है ढीली जवाबदेही और कड़ी शर्मिंदगी!

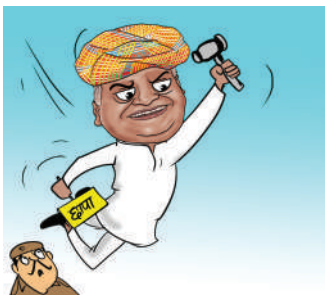

ज्योतिषीय यातायात का नया युग!

वाह! अब राजस्थान में ट्रैफिक विभाग नहीं, ज्योतिष विभाग काम करेगा! हादसा हो जाए तो सड़क नहीं, राहु दोषी। बस पलटे तो शनि की साढ़ेसाती! अब सिग्नल पर "लाल बत्ती" नहीं, "लाल ग्रह" देखना होगा। ड्राइवर सीट पर हेलमेट की जगह हनुमान चालीसा, और बस डिपो में "नवग्रह शांति यज्ञ"। विधानसभा में मुख्य सचेतक जोगेश्वर गर्ग के बयान से तो लगता है, अब सड़क इंजीनियर नहीं, ज्योतिषाचार्य सड़कें नापेंगे कि मंगल दशा में ही डामर डलवाओ। कभी सोचा नहीं था कि सड़क के गड्ढों को भी ग्रहों के गड्ढे कहा जाएगा। शुक्र है कि उन्होंने ये नहीं कहा, "हादसे इसलिए हो रहे हैं क्योंकि चंद्रमा भावुक है!" अब जनता भी ट्रैफिक पुलिस को नहीं, पंडित जी को फोन करेगी, "पंडित जी, निकलूं क्या आज या राहु काल है?" वाह री राजनीति! जब जिम्मेदारी का ग्रहण लगता है, तो हर गलती ग्रहों पर डाल दी जाती है!

गुरु, मदिरा और मोबाइल नंबर की शिक्षा

बाड़मेर की मिट्टी ने तो वीर पैदा किए, पर इस बार एक 'वीर' ने शिक्षा को ही नशे में डुबो दिया। हापों की ढाणी के सरकारी स्कूल में छुट्टी के बाद गुरुजी शराब की 'विद्या' का पाठ पढ़ाते गैलरी में ही शयन मुद्रा में पाए गए। मानो आराम हराम है का नारा बदलकर आराम ही परमानंद है, कर दिया हो। छात्रों ने वीडियो बनाया, ग्रामीणों ने वायरल किया, और प्रिंसिपल ने तुरंत कार्रवाई करते हुए उन्हें "रिलीव" कर दिया। शायद अब वह किसी और स्कूल की "वातावरणीय शिक्षा" सुधारेंगे। सुबह छात्रा की कॉपी में मोबाइल नंबर, शाम को स्कूल की गैलरी में नींद। दिन भर की परिपूर्ण शैक्षणिक दिनचर्या! शिक्षा मंत्रालय चाहे कुछ भी करे, पर कुछ गुरुओं का पाठ्यक्रम अब "चरित्रहीनता और चरस" का संयुक्त सिलेबस बन चुका है। कहते हैं गुरु अंधकार मिटाता है, पर यहां तो गुरु खुद अंधकार में डूब गया और शिक्षा व्यवस्था उसका दीया लेकर अब भी रास्ता तलाश रही है।

अब शिक्षा भी कॉस्ट कटिंग मोड पर

बाराजस्थान में अब शिक्षा भी कॉस्ट कटिंग मोड पर आ गई है। तीन सौ से ज्यादा सरकारी स्कूल अब मर्जर में चले जाएंगे। जैसे किसी कंपनी का घाटा संभालने का फार्मूला हो। शिक्षा मंत्री का कहना है कि बच्चों की संख्या 25 से कम थी, तो स्कूल का क्या करें? मानो बच्चे नहीं, टार्गेट यूनिट्स हों! जिन स्कूलों में एक भी बच्चा नहीं था, वो तो सरकार की साइलेंट क्लास बन गए। बिना हाजिरी, बिना परीक्षा। अब उन बिल्डिंगों में सरकारी फाइलें पढ़ाई जाएंगी, और टीचर्स नए पते पर ट्रांसफर होप के साथ पहुंचेंगे। सरकार कहती है कि बच्चों ने प्राइवेट स्कूलों का रुख कर लिया। यानी शिक्षा अब भी जनता के बीच लोकप्रिय है, बस सरकारी ब्रांड पर भरोसा नहीं बचा। शिक्षा का मर्जर हो या स्कूल का बंद होना, असली सवाल यही है कि अब "ज्ञान" किस स्कूल में एडमिशन लेगा?

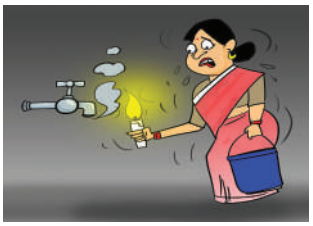

अजमेर में जल-बिजली संगम... पिछले दिनों अजमेर ने एक नया रिकॉर्ड कायम किया। नल सूखे तो क्या, बल्ब भी बुझा दिए! बीसलपुर की पाइपलाइन ने रात दो बजे आत्मनिर्भरता का परिचय देते हुए खुद ही फूटने का फैसला कर लिया। शहर की प्यास पर विराम लगा तो बिजली विभाग ने भी सोचा, जब नहाने का पानी नहीं, तो आईने के सामने रोशनी किसलिए! नतीजा यह कि लोग अब बाल्टी में पानी नहीं, उम्मीद भर रहे हैं। जिनके घर में थोड़ा पानी बचा है, वे उसे ऐसे संभाल रहे हैं जैसे बैंक में फिक्स डिपॉजिट। जिनके घर में बिजली है, वे पड़ोस में "पावरफुल" कहलाने लगे हैं। सरकार का कहना है, "शाम तक सब ठीक हो जाएगा।" जनता भी आशावादी है। बस उसे ये तय करना है कि कौन सी शाम! अजमेर के नागरिक अब विकास की नई परिभाषा गढ़ रहे हैं जब नल सूखे तो मोमबत्ती जलाओ, और जब मोमबत्ती पिघले तो उम्मीद बचाओ।

▪ **बलवंत राज मेहता,** वरिष्ठ व्यंग्यकार

केशव ग्रु

सीईओ प्रेम कु

"संस्कार, सेवा और सं

नैनोल की मिट्टी में जन्मा बड़ा सपना

राजस्थान की तपती धूप, रेत से भरी हवाएँ और साधारण-सा **गाँव—नैनोल।**
यहीं एक बालक बड़ा हो रहा था, जिसका दिल सपनों से भरा था और जिसकी आँखों में मेहनत की चमक थी—**प्रेम कुमार देवासी।**
खेती-बाड़ी का परिवार, सरल जीवन और पिता दरगाराम जी देवासी के सख्त लेकिन स्नेहभरे संस्कार।
इन्हीं ने उनके मन में तीन चीजें हमेशा के लिए बसा दीं— ईमानदारी, मेहनत और संघर्ष से कभी न डरना।
उनका एक ही सपना था—
"ऐसा काम करूँ, जिससे परिवार का नाम भी ऊँचा हो और समाज को भी रास्ता मिले।"

16 साल की उम्र—और व्यापार की शुरुआत!

जहाँ 16 साल की उम्र में अधिकतर बच्चे कॉलेज का रास्ता ढूँढते हैं, वहीं प्रेम कुमार ने जीवन का रास्ता खुद बना लिया।
2015 में उन्होंने भवन निर्माण सामग्री का व्यवसाय शुरू किया।
ना बड़ी पूँजी, ना बड़ा अनुभव—लेकिन हौसला... अडिग।
यह वही उम्र होती है जब लोग सपने बनाते हैं,
प्रेम कुमार उस उम्र में सपनों को आकार देने में जुट गए।

2016 की बाढ़-जो तोड़ भी सकती थी, पर इन्हें और जोड़ गई

साल 2016 में भयंकर बाढ़ आई। व्यापार बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया।
कोई भी साधारण इंसान टूट जाता। लेकिन प्रेम कुमार ने इसे एक सबक की तरह लिया।
वे कहते हैं—
"मुसीबतें हमारे कदम रोकने नहीं आतीं, वे हमें नया रास्ता दिखाने आती हैं।"
और उन्होंने वही किया— हर कठिनाई को अनुभव बनाया और हर अनुभव को ताकत।

ग्राहक संतुष्टि— उनका सबसे बड़ा धर्म

उनके लिए व्यापार कोई सौदा नहीं, सेवा का वादा है। **उनका मंत्र बहुत साफ़:**

- कमीटमेंट कभी न टूटे
- सेवा में कमी न रहे
- कम प्रोफिट बाजिब रेट
- क्वालिटी से समझौता नहीं

यही वजह है कि केशव सीमेंट एजेंसी, सांचौर आज क्षेत्र का सबसे भरोसेमंद नाम बन चुका है।

डिजिटल सोच—गाँव में भी आधुनिकता का स्पर्श

उन्होंने साबित कर दिया कि आधुनिक सोच के लिए बड़े शहरों की ज़रूरत नहीं होती।
व्यवसाय में शामिल किए:

- डिजिटल पेमेंट
- ऑनलाइन ऑर्डर सिस्टम
- मैनेजमेंट सॉफ्टवेयर
- टीम में व्यवस्थित कार्यसंस्कृति

उनका विश्वास- *"बदलाव से मत डरो, बदलाव को अपनाओ—वही भविष्य की चाबी है।"*

उद्योग का विस्तार—
Keshav Industries AAC Bl

बढ़ते विश्वास और माँग ने उन्हें अगले चरण तक पहुँचाया। ज
Keshav Industries – AAC Block Manufac
जो आधुनिक तकनीक पर आधारित, उच्च गुणवत्ता और पर्यावरण–अनुकूल सा
सिर्फ क्षेत्र की ज़रूरतें पूरी कर रही है, बल्कि सांचौर को एक निर्माण-केन्द्र के न

स्वयं की लॉजिस्टिक चैन— सेवा में तेजी अ

ग्राहकों की परेशानी खत्म करने के लिए उन्होंने अपने स्तर पर एक मज
नेटवर्क तैयार किया।
इसका परिणाम:

- हर लोकेशन पर तेज़ डिलीवरी
- समय पर सप्ला
- बड़ी मात्रा में निरंतर उपलब्धता
- पूरी प्रक्रिया में प

यह नेटवर्क उनकी सोच का प्रमाण है— *"सेवा धीमी*

अल्ट्राटेक सीमे

तीन बार लगातार यह सम्मान मिलना सिर्फ पुरस्कार नहीं— उनकी मेहनत और उत्कृष्टता का दस्तावेज़ है। प्रेम कुमार कहते हैं—
"ये सम्मान पिताजी की सीख की सच्ची जीत हैं।"

कुमार मंगलम बिड़ला से मुलाकात—
प्रेरणा का स्वर्णिम अध्याय

आदित्य बिड़ला समूह के चेयरमैन कुमार मंगलम बिड़ला से मुलाकात उनके जीवन को बदलने वाला क्षण साबित हुई। उनकी सहजता, नेतृत्व क्षमता और सोच ने प्रेम कुमार के भीतर एक नया विज़न जगा दिया।

युवाओं के लिए संदेश — सोने जैसा सरल, पर अमूल्य

- मेहनत का कोई विकल्प नहीं
- शॉर्टकट केवल रास्ता भटकाते हैं
- लक्ष्य स्पष्ट हो तो रास्ते खुद बनते जाते हैं
- सेवा और ईमानदारी ही असली पहचान हैं

भविष्य की दृष्टि

"एक ही छत के नीचे निर्माण की हर जर
और उनकी यात्रा बता

और यह कहानी हमें यह सिखाती है- "सपने वही सच होते हैं, जिन्हे

प ऑफ कंपनीज, सांचौर

मार देवासी—संघर्ष से सफलता तक की प्रेरक दास्तान

कल्प — वही तीन दीपक जो इस पूरी यात्रा को उजाला देते हैं।"

lock Unit

उन्होंने स्थापित की—
cturing Unit
मग्री तैयार करती है। यह यूनिट न
नए दौर में ले जा रही है।

और बिना रुकावट

मबूत और व्यापक लॉजिस्टिक

ई
ारदर्शिता
नहीं होनी चाहिए।"

पिता—पूरी यात्रा के असली पथप्रदर्शक

उनके पिता की एक बात उन्होंने हमेशा दिल में रखी:
"ईमानदारी रखो। मेहनत करो। रास्ते में रुकावटें भी आएँगी,
लोग गिराने की भी कोशिश करेंगे, पर तुम बस चलते रहना।"
यही वाक्य आज भी उनके हर फैसले की दिशा तय करता है।

समाजसेवा-
दिल से किया गया काम

उनका मानना है कि सफल वही है जो समाज को वापस कुछ दे सके।

उनके प्रयास:

- स्कूलों में पाठ्यपुस्तक वितरण
- मेधावी छात्रों को प्रोत्साहन
- विद्यालयों में CCTV कैमरे
- गौ–संरक्षण में सक्रिय योगदान
- युवाओं को खेल से जोड़ने हेतु निरंतर सहयोग

वे कहते हैं—
"खेल युवा को सकारात्मक, अनुशासित और मज़बूत बनाता है।"
उनकी यह सोच सांचौर के युवाओं में नई ऊर्जा भर रही है।

ंट से लगातार 3 'चैंपियन्स ऑफ चैंपियन्स' पुरस्कार

उपलब्धियाँ एवं पुरस्कार, एक झलक

1. वर्ष 2016– बिनानी सीमेंट अवॉर्ड: राज्य स्तर पर उत्कृष्ट बिक्री प्रदर्शन के लिए सम्मानित।
2. टाटा वायरॉन एक्सीलेंस अवॉर्ड: असाधारण बिक्री वृद्धि और मजबूत बाज़ार उपस्थिति के लिए प्रदान किया गया सम्मान।
3. अल्ट्राटेक सीमेंट – डिपो एमराल्ड अवॉर्ड (वित्त वर्ष 2019–20): पाली डिपो स्तर पर उत्कृष्ट बिक्री प्रदर्शन हेतु सम्मानित।
4. चैंपियन्स ऑफ चैंपियन्स – अल्ट्राटेक सीमेंट

- वित्त वर्ष 2020-21: राजस्थान में टॉप-परफॉर्मिंग डीलरों में 3rd रैंक।
- वित्त वर्ष 2021-22: राज्य में 1st रैंक—असाधारण बिक्री नेतृत्व के लिए।
- वित्त वर्ष 2022-23: लगातार 1st रैंक—शीर्ष प्रदर्शनकर्ता के रूप में।
- वित्त वर्ष 2023-24: फिर से 1st रैंक—रिकॉर्ड तोड़ बिक्री प्रदर्शन के साथ।

5. पर्ल्स अवॉर्ड – अल्ट्राटेक सीमेंट

- वेदर प्लस सीमेंट एवं अन्य एग्मेंटेड उत्पादों की सबसे अधिक राज्यस्तरीय बिक्री के लिए
- वित्त वर्ष 2020–21, 2021–22, 2022–23 में सम्मानित।

6. नेक्स्ट-जेन एंटरप्रेन्योर – अल्ट्राटेक: आधुनिक नेतृत्व, नवाचार और नए दौर के व्यवसायिक विस्तार के लिए विशिष्ट सम्मान।
7. अल्ट्राटेक बिल्डिंग सॉल्यूशंस अवॉर्ड: राज्य में सहायक भवन निर्माण सामग्रियों (Allied Building Materials) की सर्वोच्च बिक्री

- वित्त वर्ष 2022–23 और 2023–24 में प्राप्त।
- मंगला सरिया - बेस्ट सेलिंग अवार्ड 2024-25
- बिरला ओपस पेंट्स - बेस्ट सेलिंग अवार्ड 2024-25
- वरमोरा टाइल्स - बेस्ट सेलिंग अवार्ड 2024-25

— उनका सपना है...

रूरत—गुणवत्ता, सुविधा और भरोसे के साथ।"
ाती है कि यह सपना दूर नहीं।

सबसे खास...नैनोल की साधारण मिट्टी से उठकर

प्रदेश के प्रमुख युवा उद्यमियों में जगह बनाना किस्मत नहीं—
मेहनत, नीयत और निरंतरता का परिणाम है।

ें हम खुले दिल, साफ नीयत और मजबूत कदमों से पूरा करते हैं।"

महाराष्ट्र के मेलघाट में छह माह में 65 बच्चों की कुपोषण से मौत

कुपोषण की मार, व्यवस्था की असफलता

ज्ञान चंद पाटनी,
वरिष्ठ पत्रकार

महाराष्ट्र जैसे विकसित राज्य के मेलघाट क्षेत्र में छह माह में 65 बच्चों की कुपोषण से मौतें उस सच्चाई को उजागर करती हैं कि विकास के दावों के पीछे उपेक्षित जीवन कितने असहाय पड़े हैं। आदिवासी इलाकों में भोजन, स्वास्थ्य और पोषण की न्यूनतम सुविधाओं का अभाव सरकारी तंत्र की संवेदनहीनता को बेनकाब करता है और तत्काल सुधार की मांग करता है।

देश में ऐसे कई गंभीर मुद्दों की अनदेखी हो रही है, जिन पर देशव्यापी गंभीर चर्चा के साथ समाधान का मार्ग तलाशना बहुत जरूरी है। इनमें से एक मुद्दा है कुपोषण और भुखमरी का। हाल ही महाराष्ट्र के मेलघाट इलाके में कुपोषण से बच्चों की मौत का मामला सामने आने से यह मुद्दा एक बार फिर गरमाया है। देश के सबसे समृद्ध राज्यों में शुमार महाराष्ट्र के मुंबई शहर को देश की आर्थिक राजधानी माना जाता है, जो वाकई गर्व की बात है। शर्म की बात यह है कि इसी राज्य के मेलघाट जैसे आदिवासी क्षेत्र में बच्चे कुपोषण के कारण कालकवलित हो रहे हैं। इससे विकास व कल्याणकारी योजनाओं पर गंभीर सवाल लगता है और सरकारों की संवेदनहीनता भी उजागर होती है। आजादी के अमृतकाल में यह स्थिति वाकई चिंताजनक है और सभी को सोच—विचार के लिए मजबूर करती है।

मेलघाट महाराष्ट्र के अमरावती जिले का आदिवासी बहुल इलाका है। इस इलाके की दुर्गमता और वहां बुनियादी सुविधाओं की अनुपलब्धता के कारण लोगों की मुश्किलें खत्म होने का नाम ही नहीं ले रहीं। इस क्षेत्र की बदहाली का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि पिछले छह महीने में यहां 65 बच्चों की कुपोषण से मौत हो चुकी है। यहां बच्चों ही नहीं, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं की अचानक होने वाली मौतें भी स्थानीय प्रशासन की लापरवाही को उजागर करती हैं। ये मौतें राज्य सरकार के लोक-कल्याणकारी दावों पर सवालिया निशान लगाती हैं।

सरकारें बदलती रहीं, हालात नहीं बदले

महाराष्ट्र में सरकारें बदलती रहीं, लेकिन मेलघाट इलाके की स्थिति बरसों से ऐसी ही है। नेताओं ने सरकार बनाने— बिगाड़ने पर तो बहुत जोर दिया, खूब जोड़— तोड़ और दलबदल भी हुआ। दुर्भाग्य की बात यह है कि बच्चों को कुपोषण से मुक्त कराने पर खास ध्यान ही नहीं दिया गया। हां, इस इलाके की तरफ बॉम्बे हाईकोर्ट की निगाह जरूर गई, जहां जनहित याचिकाओं पर सुनवाई हो रही है। अदालत ने तल्ख टिप्पणी करते हुए कहा कि सरकार सिर्फ कागजों पर सबकुछ सही दिखाने की कोशिश करती है, जबकि वहां के हालात अब भी बेहद गंभीर हैं। हाईकोर्ट ने महिला एवं बाल कल्याण, स्वास्थ्य, आदिवासी विकास और वित्त विभागों के प्रमुख सचिवों को अदालत में तलब तक किया। उनसे विस्तृत रिपोर्ट मांगकर जवाबदेही तय करने का आदेश भी दिया है।

इलाज तो छोड़ो, दूध व भोजन तक नहीं

मेलघाट आदिवासी इलाके की हालत यह है कि मां को भोजन नहीं, तो बच्चे को दूध नहीं और इलाज तो बहुत दूर की बात है। गर्भवती महिलाओं एवं नवजात शिशुओं की देखभाल, पोषण एवं उपचार की व्यवस्था एकदम नदारद है। असल में इस इलाके का बारिश में संपर्क टूट जाता है। पुरुष काम की तलाश में बाहर जाते हैं और पीछे रह जाती हैं महिलाएं, बच्चे और बूढ़े। जब खाने का ठिकाना ही नहीं, तो चिकित्सा की तो बात करना ही बेमानी लगता है। बॉम्बे हाईकोर्ट ने ठीक ही कहा है कि कुपोषण को महज आंकड़े के रूप में न देखा जाए, मानव त्रासदी मानकर इस समस्या के समाधान के लिए ठोस उपाय किए जाएं।

1.80 लाख बच्चे कुपोषित..!

▪ इस बीच यह तथ्य भी चिंताजनक है कि कुपोषण का संकट महाराष्ट्र के शहरी क्षेत्रों में भी तेजी से बढ़ता जा रहा है। इसी वर्ष जुलाई में विधानसभा में महिला एवं बाल विकास मंत्री ने बताया था कि महाराष्ट्र में 1,80,000 से ज्यादा बच्चे कुपोषित हैं।

▪ यानी सरकार को समस्या का पता तो है, लेकिन इसका समाधान करने में उसकी खास दिलचस्पी नजर नहीं आती। मुंबई के उपनगरों, नासिक, पुणे, ठाणे और कई अन्य बड़े शहरों में कुपोषित बच्चों की संख्या चौंकाने वाली है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार राज्य में कुल मिलाकर 1,82,443 बच्चे कुपोषण से पीड़ित हैं। इसमें से लगभग 1,51,643 मध्यम कुपोषित और 30,800 गंभीर रूप से कुपोषित हैं। ये तो सरकारी आंकड़ें हैं। इसका मतलब है कुपोषित बच्चों की संख्या ज्यादा हो सकती है।

मुंबई के उपनगरों के हालात भी ठीक नहीं

गगनचुंबी इमारतों के लिए प्रसिद्ध मायानगरी मुंबई के उपनगरों में भी 16,344 बच्चे कुपोषित पाए गए हैं, जिनमें से 13,457 मध्यम और 2887 गंभीर रूप से प्रभावित हैं। जाहिर है झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले लोग बुनियादी खाद्य सुरक्षा और स्वास्थ्य सुविधा के लिए संघर्ष कर रहे हैं। नासिक में भी 9852 बच्चे कुपोषण का सामना कर रहे हैं, जिनमें 8944 मध्यम और 1852 गंभीर मामले हैं। पुणे में 7410 मध्यम और 1666 गंभीर रूप से कुपोषित बच्चे हैं, वहीं ठाणे जिले में 7366 मध्यम और 844 गंभीर हैं। अन्य जिलों जैसे धुले, छत्रपति संभाजी नगर और नागपुर में भी बड़ी संख्या में बच्चे कुपोषण का शिकार हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि बढ़ती खाद्य लागत, शहरी गरीबी और पोषण के प्रति जागरूकता की कमी ने शहरी क्षेत्र में भी कुपोषण की समस्या को जटिल बनाया है।

आधे से ज्यादा भारतीय 'स्वस्थ आहार' से वंचित

जब कोई व्यक्ति अपने दैनिक आहार से उतनी ऊर्जा प्राप्त नहीं कर पाता जिससे वह एक सामान्य व सक्रिय जीवन जीने में सक्षम हो सके तो इसे कुपोषण की अवस्था माना जाता है। इस वर्ष जुलाई में जारी संयुक्त राष्ट्र की स्टेट ऑफ फूड सिक्योरिटी एंड न्यूट्रिशन इन द वर्ल्ड (एसओएफआई) रिपोर्ट में बताया गया है कि लगभग आधे से अधिक भारतीय (55.6%) आज भी 'स्वस्थ आहार' का खर्च उठाने में सक्षम नहीं है। यह भी साफ हो जाता है कि दावे चाहे जो किए जाएं, लेकिन महाराष्ट्र ही नहीं देश के दूसरे राज्यों में भी कुपोषण और भुखमरी की समस्या बनी हुई है। पिछले दिनों ग्लोबल हंगर इंडेक्स (जीएचआई) 2025 रिपोर्ट ने भी इस सच को उजागर किया था। इस रिपोर्ट के अनुसार ग्लोबल हंगर इंडेक्स के मामले में भारत 123 देशों में 102वें स्थान पर है, जिसका स्कोर 25.8 है। यह स्थिति दर्शाती है कि भारत में भुखमरी की समस्या अब भी गंभीर बनी हुई है और इसमें पिछले कुछ वर्षों में खास सुधार नहीं हुआ है। 2030 के लिए मुख्य सतत् विकास लक्ष्यों में से एक है भुखमरी को शून्य स्तर पर लाना, लेकिन भारत सहित विश्व के विभिन्न देशों के जो हालात हैं, उनमें यह लक्ष्य हासिल करना असंभव सा लगता है। वैश्विक भूख सूचकांक यानी जीएचआई एक ऐसी वार्षिक रिपोर्ट है जो दुनिया भर के देशों में भुखमरी की स्थिति को मापती है। यह रिपोर्ट कन्सर्न वर्ल्डवाइड (आयरलैंड) और वेल्थुंगरहिल्फे (जर्मनी) संयुक्त रूप से प्रकाशित करता है। इसमें भूख की गंभीरता के आधार पर देशों को रैंकिंग दी जाती है।

राजस्थान सहित कई राज्यों के हालात भी अच्छे नहीं

▪ भारत के विभिन्न राज्यों में कुपोषण और भुखमरी की स्थिति अलग-अलग है। आमतौर पर, उच्च गरीबी और निम्न सामाजिक-आर्थिक संकेतकों वाले मध्यप्रदेश, झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ़, उत्तरप्रदेश, राजस्थान जैसे राज्यों में कुपोषण की समस्या ज्यादा है। राजस्थान में भी कुपोषण से होने वाली मौतों की खबरें समय-समय पर आती रही हैं, हालांकि सरकारी अधिकारी अक्सर इन मौतों का सीधा कारण कुपोषण के बजाय अन्य बीमारियों को बताते हैं। वर्ष 2016 में बारां के सहरिया इलाके में कुपोषण से बच्चों की मौत का मामला अखबारों की सुर्खियां बना था। महाराष्ट्र का आदिवासी इलाका भी इन दिनों चर्चा में है और सरकारी अधिकारियों ने मौतों का कारण कुपोषण के बजाय निमोनिया जैसी बीमारी को बताया है। महाराष्ट्र जैसे राज्य में कुपोषण एक गंभीर समस्या बनी हुई है। इससे साफ है कि धन का असमान वितरण भी गरीबी और कुपोषण की समस्या को बढ़ाता है।

▪ देश में निःशुल्क अनाज योजना, मिड डे मील जैसी योजनाएं चल रही हैं। राज्य सरकारें भी कई कल्याणकारी योजनाएं चला रही हैं। मेलघाट में कुपोषण से बच्चों की मौत का मामला सामने आने से एक बार फिर साफ हो गया कि इन योजनाओं का लाभ सभी वर्गों तक नहीं पहुंच रहा। वितरण व्यवस्था में भ्रष्टाचार, प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा का अभाव, पोषक आहार तक पहुंच न होना और संवेदनशीलता की कमी कुपोषण का प्रमुख कारण है।

▪ हैरत की बात यह है कि महाराष्ट्र में अदालती निर्देशों के बावजूद, डॉक्टरों की नियुक्ति, स्वास्थ्य केंद्रों की उपलब्धता जैसे मामलों पर काम नहीं हुआ है। समय की मांग है कि सरकारें सही आंकड़ों के आधार पर निर्णय लें। पोषक आहार की आपूर्ति एवं वितरण नेटवर्क की समीक्षा करने के साथ उसमें सुधार किया जाए। आंगनबाड़ी, आशा, एनएचएम कर्मियों को अपने काम के प्रति संवेदनशील और जिम्मेदार बनाया जाए। इसके लिए उनको विशेष आर्थिक लाभ देकर भी प्रोत्साहित किया जा सकता है। यह सुनिश्चित करना होगा कि बच्चों, गर्भवती महिलाओं और माताओं तक समय पर पोषक आहार, स्वच्छ पानी और प्राथमिक चिकित्सा पहुंचे। सरकार को निगरानी और जवाबदेही तंत्र बनाना होगा, जिससे ऐसी त्रासदी दोहराई न जाए।

▪ बेहतर तो यह है कि मां-बच्चे के पोषण के साथ उपचार पर भी खास ध्यान दिया जाए। निश्चित रूप से मेलघाट में कुपोषण से बच्चों की मौतें सरकार और समाज के लिए चेतावनी है। जहां एक तरफ विकास की चमक है, वहीं दूसरी तरफ पीड़ा, उपेक्षा और शोक का अंधकार है। बॉम्बे हाईकोर्ट ने हाल की सुनवाई में राज्य सरकार की संवेदनहीनता और लापरवाही की तीखी आलोचना करते हुए इसे मानवता का मुद्दा बताया है। न्यायालय की फटकार के बाद तो सरकार को जागना चाहिए। लोगों को कुपोषण के चंगुल से मुक्त कराने के लिए महाराष्ट्र ही नहीं देशभर में विशेष अभियान चलाया जाना चाहिए। यह तय है कि कुपोषण और भुखमरी के चंगुल में फंसे लोग अपने आप इससे बाहर नहीं निकल सकते। सरकार और समाज के समर्थ— संवेदनशील लोग उनकी तरफ मदद का हाथ बढ़ाएं। कुपोषण और भुखमरी सिर्फ एक आर्थिक या सामाजिक समस्या नहीं है, बल्कि यह मानव अधिकारों और जीवन की मूलभूत गरिमा से जुड़ा मामला भी है। इस समस्या के समाधान के लिए सतत प्रयासों की जरूरत है। वंचित वर्ग की हर हालत में सहायता की जानी चाहिए, ताकि वह भी सम्मान के साथ जी सके और भार बनने की बजाय पूरी क्षमता के साथ देश के विकास में अपनी भागीदारी निभा सके।

भारतीय बाजार: नब्बे प्रतिशत बचत या सौ प्रतिशत भ्रम?

छूट का अजीब खेला

बलवंत राज मेहता वरिष्ठ पत्रकार

भारतीय बाजार में इन दिनों एक नया मायाजाल बुना जा रहा है एम.आर.पी. पर भारी छूट का खेल। ऑनलाइन स्टोर हों या मॉल के शो-रूम, नब्बे प्रतिशत तक की छूट के बैनर हर जगह लटक रहे हैं। उपभोक्ता के मन में सवाल उठता है, अगर यह सचमुच बचत है तो व्यापारी नुकसान में क्यों नहीं? और अगर व्यापारी फायदा ही कमा रहा है, तो यह बचत आखिर किसकी जेब में जा रही है?

दरअसल एम.आर.पी., यानी अधिकतम खुदरा मूल्य वह सीमा है जिससे अधिक कीमत वसूलना अवैध है। पर एम.आर.पी. तय करने का अधिकार पूरी तरह निर्माता या पैकर के पास होता है। कोई सरकारी अधिकारी यह नहीं तय करता कि किसी उत्पाद की लागत कितनी है और उसकी एम.आर.पी. कितनी होनी चाहिए। यही वह जगह है जहां व्यापार की चालाकी शुरू होती है। जब कोई कंपनी किसी वस्तु की एम.आर.पी. जानबूझकर अधिक रखती है, तो बाद में उस पर 70 या 90 प्रतिशत की छूट दिखाना बेहद आसान हो जाता है।

अब सवाल यह उठता है कि किसी वस्तु की खरीद के समय एम.आर.पी. को कितना महत्व दिया जाना चाहिए? सच तो यह है कि एम.आर.पी. अब "वास्तविक कीमत" का संकेत नहीं रह गया। यह केवल एक कानूनी औपचारिकता है, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि कोई व्यापारी इस सीमा से अधिक न वसूले। किंतु अधिकांश उपभोक्ता इसे 'असली कीमत' मान बैठते हैं। यही वह मानसिक भ्रम है, जिसका उपयोग विपणन रणनीतियां कुशलता से करती हैं।

उच्च 'एम.आर.पी.' और 'भारी छूट' का यह खेल उपभोक्ता की मनोविज्ञान पर आधारित है। इंसान स्वभावतः 'सेविंग' के भाव से आकर्षित होता है। जब किसी टैग पर '9,999' काटकर '999' लिखा दिखता है, तो दिमाग में खुशी का रसायन 'डोपामिन' तेजी से सक्रिय होता है।

व्यक्ति यह सोचता है कि उसने नौ हज़ार रुपये बचा लिए, जबकि वस्तु की वास्तविक लागत शायद पांच सौ रुपये से अधिक नहीं थी। यही एंकरिंग इफेक्ट है। जहां ऊंची कीमत को आधार मानकर उपभोक्ता कम कीमत को लाभ समझ लेता है।

यहां एक बड़ा प्रश्न यह भी है कि जब कोई उत्पाद नब्बे प्रतिशत छूट के बाद भी लाभ में बिक सकता है, तो उसकी असली लागत क्या होगी? क्या निर्माता पहले से ही कीमत को इतना बढ़ा देता है कि भारी छूट के बावजूद लाभ सुरक्षित रहे? यह शंका निराधार नहीं है। वस्त्र, जूते, कास्मेटिक, खिलौने और यहां तक कि पैक्ड खाद्य वस्तुओं में यह प्रवृत्ति आम हो चुकी है।

ऑनलाइन बाजारों में तो यह भ्रम और अधिक बढ़ गया है। इंटरनेट पर हर उत्पाद की कीमत सेकंडों में बदल जाती है। ई-कॉमर्स साइटें कृत्रिम बुद्धिमत्ता के जरिये उपभोक्ता के सर्च पैटर्न, लोकेशन और पिछली खरीदारी का विश्लेषण करके मूल्य तय करती हैं। इसीलिए एक ही उत्पाद दो लोगों को अलग-अलग कीमत पर दिखाया जा सकता है। यह तकनीकी चालाकी अक्सर 'भारी छूट' के रूप में प्रस्तुत की जाती है।

सरकार ने भी इस खेल पर अंकुश लगाने के लिए हाल के वर्षों में कुछ कदम उठाए हैं। उपभोक्ता मामलों के मंत्रालय और सेंट्रल कंज्यूमर प्रोटेक्शन अथॉरिटी (सीसीपीए) ने ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्मों की भ्रामक छूटों और 'डार्क पैटर्न्स' के खिलाफ कार्रवाई की है।

वर्ष 2025 में फर्स्टक्राय पर 2 लाख का जुर्माना लगा, क्योंकि उसने 'एम.आर.पी.' टैक्स सहित दिखाया था, जबकि चेकआउट पर जीएसटी अलग वसूला जा रहा था। 2025 के जून में सीसीपीए ने सभी ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्मों को तीन महीने में 'सेल्फ-ऑडिट' कर यह घोषित करने का आदेश दिया कि वे किसी भी 'डार्क पैटर्न' का उपयोग नहीं कर रहे हैं।

2023 में सरकार ने आधिकारिक रूप से 'डार्क पैटर्न्स' को प्रतिबंधित किया। अब कोई भी प्लेटफॉर्म उपभोक्ता को झूठे काउंटडाउन टाइमर, छिपे शुल्क या गलत छूट दिखाकर भ्रमित नहीं कर सकता। इससे पहले 2021 में सीसीपीए ने प्रमुख ऑनलाइन कंपनियों को घटिया क्वालिटी के प्रेशर कुकर बेचने पर नोटिस दिए थे। सरकार के इन कदमों से यह तो स्पष्ट है कि निगरानी बढ़ रही है, पर नियंत्रण अभी भी सीमित है। कारण एम.आर.पी. का निर्धारण निजी क्षेत्र के हाथ में है और उसकी समीक्षा का कोई सार्वभौम मानदंड तय नहीं। अब प्रश्न उठता है कि क्या उपभोक्ता शिक्षा की कमी इस समस्या की जड़ नहीं है? भारत में 'जागो ग्राहक जागो' जैसी मुहिमें तो चलती हैं, लेकिन डिजिटल और मनोवैज्ञानिक बाज़ार-रणनीतियों की समझ आम उपभोक्ता तक अभी नहीं पहुंची। जब तक उपभोक्ता यह नहीं सीखेगा कि 'छूट' और 'सस्ता' हमेशा समानार्थी नहीं होते, तब तक यह भ्रम बरकरार रहेगा।

विदेशों में इस दिशा में कड़े नियम हैं। यूरोपियन यूनियन ने यह अनिवार्य किया है कि यदि कोई कंपनी 'डिस्काउंट' दिखाती है, तो उसे पिछले 30 दिनों की औसत बिक्री कीमत भी साथ बतानी होगी। इससे उपभोक्ता को वास्तविक बचत का अंदाज़ा हो जाता है। अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया में भी 'फेक डिस्काउंट' को धोखाधड़ी माना जाता है। भारत में अभी ऐसा कोई प्रावधान लागू नहीं है, लेकिन इस दिशा में चर्चा शुरू हो चुकी है। आख़िरकार यह तय करना उपभोक्ता के विवेक पर ही निर्भर है कि वह किसी '90% छूट' को लाभ माने या शक। यदि वह खरीदने से पहले दो मिनट तुलना कर ले, दूसरे प्लेटफॉर्म पर दाम देख ले, या पिछले दिनों की कीमत पर नज़र डाल ले तो शायद वह इस जाल में न फंसे। छूट का आकर्षण हमेशा रहेगा, पर विवेक का प्रकाश उससे बड़ा होता है। बाजार की यह चमक तभी तक काम करती है जब तक ग्राहक अपनी आंखें बंद रखता है। एक बार उसने देखना सीख लिया, तो हर 'डिस्काउंट' का नकाब उतर जाएगा। एम.आर.पी. का असली अर्थ यही है मैक्सिमम रीटेल प्राईज, पर आज यह मार्केटिंग रेफरेंस पाइंट बन गया है। जरूरत है कि उपभोक्ता, सरकार और व्यापारी तीनों मिलकर इस भ्रम की परतों को उतारें। तभी बाजार ईमानदार होगा और ग्राहक वास्तव में जागरूक कहलाएगा।

'डिस्काउंट के नाम पर कीमत बढ़ाकर भारी छूट दिखाने का चलन तेजी से बढ़ रहा है। उपभोक्ता को समझना चाहिए कि व्यापारी कभी नुकसान उठाकर वस्तु नहीं बेचता। जरूरत से ज़्यादा डिस्काउंट दिखे तो सतर्क रहें, क्योंकि वास्तविक लाभ अक्सर उतना नहीं होता जितना बताया जाता है। ऐसी स्थिति में वस्तु की अनुमानित सही कीमत समझकर ही खरीदें। भ्रामक विज्ञापन की स्थिति में उपभोक्ता संरक्षण कानून के तहत कार्रवाई भी की जा सकती है।'

- डॉ अनंत शर्मा, नेशनल चेयरमैन कंज्यूमर्स कनफेडरेशन ऑफ़ इंडिया

'कानून के अनुसार कोई भी ऐसा विज्ञापन जो गलत प्रभाव पैदा करे, भ्रम फैलाए या अधूरी जानकारी दे Misleading Advertisement कहलाता है, और 90% जैसी कृत्रिम छूट इसी श्रेणी में आती है। ऐसे भारी डिस्काउंट उपभोक्ता के साथ व्यावसायिक छलावा बनते जा रहे हैं, इसलिए पारदर्शी मूल्य निर्धारण और प्रभावी नियंत्रण जरूरी है। कृत्रिम छूट पर रोक उपभोक्ता संरक्षण और बाजार की स्वस्थ प्रतिस्पर्धा दोनों को मजबूत करेगी। सही जानकारी और सही मूल्य सुनिश्चित करना ही जिम्मेदार समाज और मजबूत अर्थव्यवस्था की नींव है।'

-डॉ कमल किशोर सारस्वत, अधिवक्ता, राजस्थान उच्च न्यायालय

जब विज्ञान और परंपरा साथ चलते हैं, बदलती है वैश्विक स्वास्थ्य नीति

जड़ी-बूटियों की ओर लौटती दुनिया

दुनिया आधुनिक दवाओं के दुष्प्रभाव, महंगे इलाज और सीमित विकल्पों से जूझ रही है। ऐसे समय भारत ने आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा को वैश्विक मंच पर विज्ञान के साथ जोड़कर स्वास्थ्य की एक नई राह दिखाई है। डब्ल्यूएचओ के साथ भारत की साझेदारी, जीसीटीएम की स्थापना और पारंपरिक चिकित्सा के वैज्ञानिक शोध ने भारत को इस परिवर्तन का अग्रदूत बना दिया है। जड़ी-बूटियों से लेकर डिजिटल हेल्थ मॉडलों तक, भारत अब वैश्विक चिकित्सा के भविष्य को दिशा दे रहा है।

रमेश शर्मा
वरिष्ठ पत्रकार

जब दुनिया के लाखों लोग आधुनिक दवाओं के साइड इफेक्ट्स, खर्च और सीमाओं से जूझ रहे हैं, तब भारत ने प्रकृति और विज्ञान को जोड़ती स्वास्थ्य यात्रा का नया रास्ता दिखाया है। यहां देश की धड़कनों में आयुर्वेद, योग और हमारी धरती से जुड़ी हजारों वर्ष पुरानी परंपराएं अब जाग उठी हैं। भारत ही नहीं, पूरी दुनिया उनमें उम्मीद तलाश रही है। आयुर्वेद, योग, होम्योपैथी और यूनानी जैसी प्रणालियां अब केवल भारत की विरासत या सांस्कृतिक धरोहर ही नहीं रहीं, वे वैश्विक स्वास्थ्य नीति का चर्चित विषय बन रही हैं।

भारत ने इस दिशा में कई ठोस कदम उठाए हैं। भारत न सिर्फ अपने अतीत को पुनर्जीवित कर रहा है, बल्कि भविष्य के स्वास्थ्य का संतुलन भी तय कर रहा है, जहां विज्ञान और परंपरा एक साथ आगे बढ़ें। हर व्यक्ति को स्वास्थ्य का अधिकार मिले। भारत ने विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के साथ मिलकर पारंपरिक चिकित्सा को संस्थागत स्वरूप दिया है। आयुर्वेदिक दवाओं के वैज्ञानिक परीक्षण, योग को अंतरराष्ट्रीय मंच पर प्रसारित करने और यूनानी-सिद्ध पद्धतियों को आधुनिक चिकित्सा के साथ जोड़ने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

'पारंपरिक चिकित्सा' का वैश्विक नेतृत्व

- आज जब पूरी दुनिया आधुनिक चिकित्सा पर निर्भर है, यकीन मानिए तब एक और स्वास्थ्य क्रांति चुपचाप आगे बढ़ रही है, और वह है पारंपरिक चिकित्सा की वापसी। अचरज और गौरव की बात यह है इसमें भारत विश्व का नेतृत्व कर रहा है। याद कीजिए दादी-नानी के उस कड़वे काढ़े को, जिसने न जाने कितनी बार हमारी सर्दी-जुकाम को ठीक किया। अनेक योग शिक्षक तो विदेश में जाकर भारतीय जीवन पद्धति का परचम लहरा रहे हैं। भारत की मिट्टी से जुड़ी ये कहानियां अब दुनिया भर के लाखों लोगों की प्रेरणा बन रही हैं।
- कोरोना संकट के समय भारत ने आयुर्वेद और योग के माध्यम से न सिर्फ अपने लोगों को स्वस्थ किया, बल्कि दुनिया भर के लिए वैकल्पिक चिकित्सा की शक्ति दिखाई। डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म और टेलीमेडिसिन के माध्यम से दूर-दराज़ इलाकों तक स्वास्थ्य सेवा पहुंची, यही असली स्वास्थ्य की समावेशिता है।

परंपरा—विज्ञान का वैश्विक केंद्र है जीसीटीएम

- साल 2022 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भारत सरकार की मदद से ग्लोबल सेंटर फॉर ट्रेडिशनल मेडिसिन (जीसीटीएम) की स्थापना की। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने डब्ल्यूएचओ के महानिदेशक की उपस्थिति में गुजरात के जामनगर में डब्ल्यूएचओ-जीसीटीएम की आधारशिला रखी।
- यह डब्ल्यूएचओ का पहला और एकमात्र वैश्विक केंद्र है जो पारंपरिक, पूरक और एकीकृत चिकित्सा पर वैज्ञानिक अनुसंधान, मानकीकरण, प्रशिक्षण और वैश्विक सहयोग पर काम कर रहा है। भारत ने इसके प्रारंभिक बुनियादी ढांचे के लिए लगभग 250 मिलियन डॉलर की प्रतिबद्धता जताई थी। जुलाई 2024 में भारत और डब्ल्यूएचओ के बीच 10 साल के लिए 85 मिलियन डॉलर के परिचालन सहयोग का समझौता हुआ।
- इस केंद्र की स्थापना ने साफ कर दिया कि भारत इस क्षेत्र में निर्णायक भूमिका निभा रहा है। जीसीटीएम आज अफ्रीका, एशिया और लैटिन अमेरिकी देशों के विशेषज्ञों के लिए एक शोध-हब बन चुका है। यह केवल एक संस्थान नहीं, बल्कि परंपरा और आधुनिक विज्ञान के साझे भविष्य का प्रतीक है।

दूसरा वैश्विक शिखर सम्मेलन भी भारत में... विश्व स्वास्थ्य संगठन और भारत सरकार के आयुष मंत्रालय ने 17–18 अगस्त 2023 को गुजरात के गांधीनगर में पहला वैश्विक पारंपरिक चिकित्सा शिखर सम्मेलन आयोजित किया। अब दूसरा ग्लोबल ट्रेडिशनल मेडिसिन समिट 17–19 दिसंबर 2025, नई दिल्ली में होने जा रहा है। भारत ने हाल ही में दुनिया भर के राजदूतों और उच्चायुक्तों के समक्ष इस सम्मेलन की रूपरेखा, इसके वैश्विक महत्व और साक्ष्य-आधारित पारंपरिक चिकित्सा में बहुपक्षीय सहयोग की संभावनाओं को प्रस्तुत किया।

भारत का वैश्विक नेतृत्व

जीटीएमसीः विश्व का पहला और एकमात्र पारंपरिक चिकित्सा केंद्र

जामनगर में स्थापित ग्लोबल सेंटर फॉर ट्रेडिशनल मेडिसिन विश्व का पहला और एकमात्र डब्ल्यूएचओ द्वारा मान्यता प्राप्त वैश्विक केन्द्र है जो दुनिया भर में पारंपरिक उपचारों के वैज्ञानिक शोध, नीति-निर्माण, और डिजिटल डोक्यूमेंटेशन का प्रमुख हब है।

ग्लोबल डिजिटल ट्रेडिशनल मेडिसिन डेटाबेस

भारत सरकार और डब्ल्यूएचओ द्वारा एक ग्लोबल डिजिटल ट्रेडिशनल मेडिसिन डेटाबेस तैयार किया जा रहा है, जिससे दुनिया भर के शोधकर्ताओं को प्रामाणिक जानकारी मिले।

डब्ल्यूएचओ सदस्य देशों का रुझान

डब्ल्यूएचओ रिपोर्टों के अनुसार करीब 90% सदस्य देशों ने पारंपरिक चिकित्सा के उपयोग की सूचना दी है। यानी लगभग 170 प्लस देश किसी न किसी रूप में परंपरागत मेडिसिन का उपयोग कर रहे हैं।

विश्व जर्नलों में बढ़ती वैज्ञानिक रिपोर्टें

कई अंतरराष्ट्रीय जर्नल्स में आयुर्वेद, योग और हर्बल-आधारित उपचारों पर शोध-पत्र बढ़े हैं। कैंसर, मधुमेह और मानसिक स्वास्थ्य में इनसे जुड़े अध्ययन प्रकाशित हुए हैं।

भारत में पारंपरिक चिकित्सा की ताकत

- पारंपरिक चिकित्सा प्रणाली आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी और होम्योपैथी को बढ़ावा देने के लिए 2014 में आयुष मंत्रालय स्थापित किया गया।
- हाल ही में भारतीय आयुष मंत्रालय ने आयुष ग्रिड (Ayush Grid) लॉन्च किया। यह एक डिजिटल हेल्थ इकोसिस्टम है, इसके जरिए पारंपरिक चिकित्सा की सेवाएं ऑनलाइन कहीं भी उपलब्ध होंगी।
- भारत ने संयुक्त राष्ट्र के 'इंटरनेशनल डे ऑफ योग' को वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाई। 2024 में इस दिवस पर रिकॉर्ड 24.53 करोड़ लोगों ने भागीदारी निभाई। विश्व योग दिवस 2015 से मनाया जा रहा है।
- कुछ रिपोर्ट्स के अनुसार आयुष बाजार 2014 में 2.85 बिलियन डॉलर से बढ़कर 2023 में 43.4 बिलियन डॉलर हो गया है। निर्यात 1.09 बिलियन डॉलर से बढ़कर 2.16 बिलियन डॉलर हो गया है। यह आयुष में बढ़ते आर्थिक प्रभाव को दिखाता है।
- भारत सरकार के आयुष मंत्रालय ने पारंपरिक चिकित्सा को बढ़ावा देने के लिए 100 देशों में आयुष सूचना केंद्र बनाए गए। पारंपरिक औषधियों की गुणवत्ता नियंत्रण और स्वास्थ्य कर्मियों के प्रशिक्षण पर भी विशेष जोर दिया गया।
- जामनगर की तरह ही चीन, ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका भी ऐसे केंद्र खोलने की योजना बना रहे हैं। अफ्रीका, जापान, और यूरोप के कई देशों में भारतीय पारंपरिक चिकित्सा के प्रशिक्षण प्रोग्राम शुरू किए गए हैं, जिससे भारतीय मॉडल का वैश्विक प्रसार हो रहा है।
- भारत में आयुष मंत्रालय डिजिटल हेल्थ, एआई समाधान और टेलीमेडिसिन में पारंपरिक चिकित्सा को समाहित कर रहा है। यह नवाचार दिखाता है कि किस तरह पुरातन ज्ञान वैश्विक डिजिटल स्वास्थ्य में एकीकृत हो रहा है।
- भारत में साढ़े 7 लाख से अधिक पंजीकृत आयुष चिकित्सक 886 स्नातक, 251 स्नातकोत्तर महाविद्यालय और तीन उन्नत राष्ट्रीय आयुष संस्थान हैं।
- आयुष अनुसंधान पोर्टल पर 43,000 से अधिक अध्ययन उपलब्ध हैं।

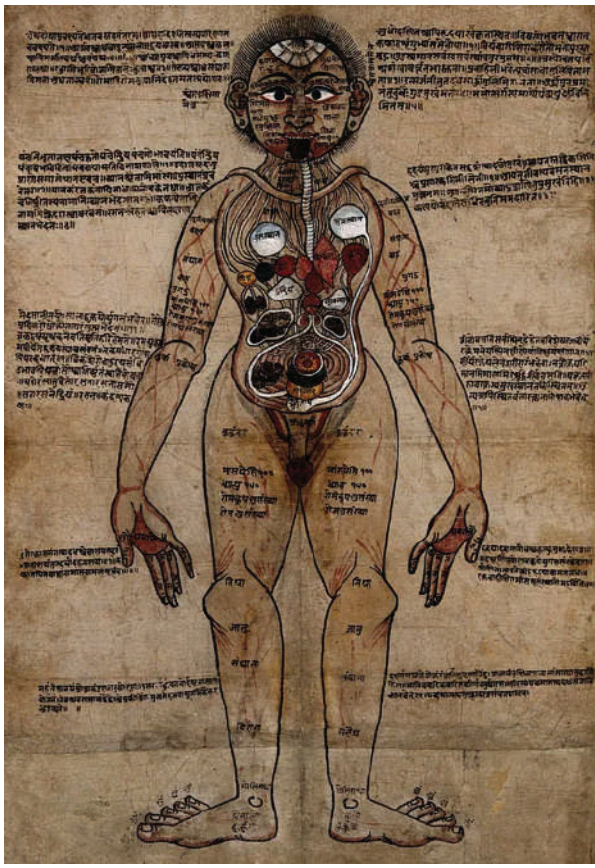

भारत में पारंपरिक चिकित्सा, ताकत और पहचान

पारंपरिक चिकित्सा केवल उपचार नहीं, यह भारत की सांस्कृतिक पहचान, सामुदायिक ज्ञान और प्रकृति-आधारित जीवनदर्शन का विस्तार है। केंद्रीय आयुष राज्य मंत्री प्रतापराव जाधव ने कहा, भारत और डब्ल्यूएचओ मिलकर पारंपरिक चिकित्सा को विज्ञान और नीति दोनों के स्तर पर वैश्विक मुख्यधारा में लाने की दिशा में काम कर रहे हैं। जीटीएमसी में अफ्रीकी, एशियाई और लैटिन अमेरिकी देशों के विशेषज्ञों का प्रशिक्षण यह दर्शाता है कि भारत अब मॉडल, उत्पाद, तकनीक और चिकित्सा प्रणाली सभी के स्तर पर ज्ञान का निर्यातक बन गया है।

उम्मीद की रोशनी... भारत की पारंपरिक चिकित्सा केवल अतीत नहीं, यह भविष्य की स्वास्थ्य प्रणाली का महत्वपूर्ण स्तंभ बनकर उभर रही है। जब आधुनिक चिकित्सा अपनी सीमाओं से जूझ रही है, तब भारत का अनुभव, योग का विज्ञान और आयुर्वेद की साक्ष्य-आधारित प्रगति दुनिया को एक नया रास्ता दे रही है। भारत आज विश्व को सिर्फ उपचार नहीं दे रहा, बल्कि समग्र स्वास्थ्य का दर्शन दे रहा है। यही वजह है कि दुनिया का झुकाव फिर से जड़ी-बूटियों, योग, और प्राकृतिक चिकित्सा की ओर है, और इस परिवर्तन के केंद्र में है भारत।

दिल्ली धमाका बताता है अब विज्ञान और तकनीक के सहारे नई दिशा ले रहा है आतंकवाद

नया आतंक, नई चुनौती

दिल्ली का हालिया धमाका यह स्पष्ट कर देता है कि आतंकवाद अब बारूद का पारंपरिक खेल नहीं रहा। इसमें रसायन, डिजिटल ट्रिगर और पेशेवर दिमागों की भूमिका ने सुरक्षा एजेंसियों की चिंताएं बढ़ा दी हैं। कट्टर विचारधारा और उच्च कौशल के मेल से उभरता यह नया मॉडल भारत की आंतरिक सुरक्षा के सामने कहीं अधिक जटिल और खतरनाक चुनौती बन चुका है।

मणिमाला शर्मा,
वरिष्ठ पत्रकार

दिल्ली का हालिया ब्लास्ट यह साफ़ कर देता है कि आतंकवाद अब केवल बारूद का खेल नहीं रहा, यह हमला रसायन, डिजिटल ट्रिगर और पेशेवर कुशलता का संगम था। शुरुआती जांच में रिमोट-ट्रिगरिंग, उन्नत रासायनिक मिश्रण और डॉक्टरों समेत तकनीकी विशेषज्ञों के संभावित भागीदारी के सुराग मिले हैं, जिससे खतरे की दिशा ही बदल गई है। यह हिंसा अब सीमाओं से नहीं, बल्कि हमारे शहरों, प्रतिष्ठित संस्थानों और डिजिटल गलियारों से उठ रही है। इतना बड़ा बदलाव खामोशी से आया है कि समाज का भरोसा ही संदेह के घेरे में आ गया है। यह मोड़ भारत की आंतरिक सुरक्षा व्यवस्था को गंभीर सवालों के घेरे में खड़ा करता है कि क्या हम आतंक के इस नए विज्ञान को सचमुच पहचानने और रोकने के लिए तैयार हैं?

धमाका और उसका वैज्ञानिक आधार

जांचकर्ताओं का अनुमान है कि इस विस्फोट में पारंपरिक आईईडी (Improvised Explosive Device) से अलग, एक रासायनिक-साइंटिफिक मिश्रण इस्तेमाल किया गया था। रसायन की बारीक संरचना और मिश्रण की जटिलता यह संकेत देती है कि इसे तैयार करने वाले को प्रयोगशाला या मेडिकल सेटअप का गहरा ज्ञान था। टाइमिंग और ट्रिगर सिस्टम डिजिटल या रिमोट तरीकों पर आधारित लगते हैं, जो ऑपरेटर को दूर से हमला संचालित करने का विकल्प देते हैं। विस्फोट के बाद फोरेंसिक विश्लेषण में मिले अवशेष यह दिखाते हैं कि हमलावर ने तकनीकी दक्षता के साथ विस्फोट को डिज़ाइन किया था, जिसमें इफेक्ट और फ्यूरिंग का पूरा ध्यान रखा गया था।

डॉक्टरों की भूमिका : भरोसेमंद पेशे से खतरनाक ट्रेन्ज़िशन

यह हमला एक सामाजिक और नैतिक चक्रव्यूह खोलता है कि कैसे जीवन बचाने वाला पेशेवर वर्ग हिंसा की योजना में एक उपकरण बन सकता है। प्रारंभिक जांच में डॉक्टरों और मेडिकल छात्रों की भागीदारी पर गहरे सवाल उठे हैं, क्योंकि विस्फोटक सामग्री की प्रकृति को केवल रसायन-ज्ञान में प्रशिक्षित व्यक्ति ही समझ सकते हैं। यह प्रवृत्ति भारत के पहले के आतंकवादी मामलों की याद दिलाती है, जहां चिकित्सा और इंजीनियरिंग पृष्ठभूमि वाले युवाओं की भूमिका सामने आई थी। एजेंसियां चिंतित हैं कि आतंकी समूह अब 'उच्च-स्किलेड' प्रोफेशनल्स को सक्रिय रूप से भर्ती कर रहे हैं। वे न केवल तकनीक और ज्ञान लाते हैं, बल्कि हमारी सामाजिक संरचना के भीतर आराम से रहकर स्लीपर सेल के रूप में सक्रिय रह सकते हैं।

स्किल्ड रैडिकलाइजेशन : सुरक्षा एजेंसियों की नई चुनौती

भारत की खुफिया एजेंसियों के लिए यह खतरा सिर्फ़ विचारधारा का नहीं है, बल्कि ज्ञान और कौशल का दुरुपयोग है, जिसे 'स्किल्ड रैडिकलाइजेशन' कहा जाता है। कट्टर विचारधारा डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से पेशेवरों तक पहुंचती है, और उनका कौशल (जैसे केमिकल हैंडलिंग) हिंसक योजनाओं में इस्तेमाल किया जाता है। ये लोग छोटे, लो प्रोफ़ाइल और तकनीकी रूप से सक्षम माइक्रो मॉड्यूल बनाते हैं।

सुरक्षा एजेंसियों के लिए चुनौती यह है:

- ऐसे लोग सामान्य नागरिक की तरह दिखते हैं, इसलिए प्रोफाइलिंग कठिन होती है।
- उनका पेशा और नेटवर्क उनकी पहचान छुपाने में मदद करते हैं।
- उनकी क्षमता और पहुंच आतंक को एक नए स्तर पर ले जाती है जिसे पुरानी इंटेलिजेंस पद्धतियां पकड़ नहीं पातीं।

भारत में पहले के संदिग्ध प्रकरण.... इस धमाके से पहले भी भारत ने कुछ ऐसी घटनाओं की जांच की है जो इस ट्रेंड की ओर इशारा करती थीं, जैसे कि इंजीनियरिंग और मेडिकल छात्रों की गिरफ्तारी, जिन पर कट्टर विचारधारा के समर्थन का आरोप था। सुरक्षा रिपोर्टों में उल्लेख किया गया कि आतंकवादी नेटवर्क में शामिल कुछ व्यक्तियों ने लैब-ग्रेड रसायन उपलब्ध करने में मदद की। शैक्षणिक संस्थानों ने भी स्वीकार किया है कि कुछ छात्र लाइब्रेरी और लैब संसाधनों का ग़लत उपयोग कर रहे थे। ये उदाहरण दिखाते हैं कि स्किल्ड रैडिकलाइजेशन भारत में एक नए प्रकार की सेल के रूप में उभर रहा है, जिसे रोकने के लिए केवल पुलिसिंग पर्याप्त नहीं है।

बदलती रणनीति : नया आतंकवाद, नया मॉडल

आज का आतंकवाद बड़ा, स्पष्ट और स्थिर नेटवर्क नहीं है। अब माइक्रो सेल मॉडल अधिक आम हो गया है, जहां दो-तीन सदस्य ही ऑपरेशन चला सकते हैं। माध्यम के रूप में उच्च तकनीक का उपयोग, जैसे रिमोट ट्रिगर और एन्क्रिप्टेड प्लेटफॉर्म, बढ़ चुका है। प्रशिक्षण अब भौतिक कैंपों के बजाय ऑनलाइन, विचार आधारित समूहों में हो रहा है। आतंकवादी संगठन अब विशेषज्ञ पेशेवरों की तलाश कर रहे हैं। यह रणनीतिक बदलाव भारत के सुरक्षा तंत्र को चुनौती देता है, क्योंकि पारंपरिक खुफिया मॉडल अब उतना प्रभावी नहीं रहा।

दिल्ली धमाके ने हमारे सुरक्षा तंत्र की बड़ी कमजोरियों को उजागर किया है

- **इंटेलिजेंस समन्वय**: राज्य और केंद्र की एजेंसियां अभी भी डेटा साझा करने में असहयोग दिखाती हैं।
- **लोकल थ्रेट असेसमेंट**: छोटे शहरों में सुरक्षा कवरेज अपर्याप्त है।
- **तकनीकी क्षमता**: बहुत से फॉरेंसिक इकाइयां आधुनिक जरूरतों के अनुरूप प्रशिक्षित नहीं हैं।
- **पेशेवर निगरानी गैप**: मेडिकल/टेक स्टूडेंट्स या कर्मचारियों के संदिग्ध नेटवर्क पर निगरानी सीमित है।

आगे का रास्ता : पुनरावृत्ति नहीं, पुनर्संरचना

इस खतरे का सामना करने के लिए हमें अधिक सक्रिय, सामूहिक और आधुनिक कदम उठाने होंगे। इसमें पेशेवर संस्थानों (मेडिकल, इंजीनियरिंग, टेक कॉलेज) में संदिग्ध गतिविधि की पहचान के लिए प्रणाली बनाना, एक इंटीग्रेटेड इंटेलिजेंस प्लेटफार्म की स्थापना करना, और फोरेंसिक संस्थाओं की रसायन-विश्लेषण क्षमता को अपग्रेड करना शामिल है। इसके अतिरिक्त, डिजिटल कट्टरता की पहचान और रोकथाम के लिए साइबर-सेल का विस्तार और सामुदायिक जागरूकता बढ़ाना महत्वपूर्ण है।

बदलती मानसिकता, बदलती रणनीति

दिल्ली धमाके ने हमारे सामने यह स्पष्ट कर दिया है कि आतंकवाद अब सिर्फ अस्त्रों का खेल नहीं है। यह उन दिमागों का खेल है, जहां पेशेवर ज्ञान और कट्टर विचारधारा मिलकर हिंसा को एक नए विज्ञान में बदलते हैं। अगर हम इसे सिर्फ सुरक्षा एजेंटों की समस्या मानें और शिक्षित पेशेवरों की जिम्मेदारी को नजरअंदाज करें, तो भविष्य में और भी खतरनाक हमलों का रास्ता खुला रहेगा। हमें अब एक सुरक्षित भारत बनाने के लिए न सिर्फ हमलावरों का सामना करना होगा, बल्कि उन विचारों और क्षमताओं का भी, जो छुपकर हमला कर सकते हैं।

गफूर से गोदारा तकः कांग्रेस की नई रणनीति और पुराने सवाल

बाड़मेर में अपने फैसले से घिरी कांग्रेस

बाड़मेर जिला कांग्रेस कमेटी में नई नियुक्ति ने पार्टी के भीतर गहरी बेचैनी और प्रतिनिधित्व से जुड़ी चिंताओं को उजागर कर दिया है। गफूर अहमद को हटाकर लक्ष्मण गोदारा को अध्यक्ष बनाने का फैसला न केवल मुस्लिम समुदाय में असंतोष पैदा कर रहा है, बल्कि यह कांग्रेस की आंतरिक नीति, जातीय समीकरणों और संगठनात्मक पारदर्शिता को लेकर गंभीर प्रश्न भी खड़े करता है। यह विवाद दिखाता है कि राजनीतिक दलों के निर्णय केवल पद नहीं बदलते, वे विश्वास, संतुलन और भविष्य की रणनीति को भी प्रभावित करते हैं।

धर्मसिंह भाटी, ✍ वरिष्ठ पत्रकार

थार के विशाल रेतीले विस्तार में राजनीतिक गतिविधियां अक्सर दिल्ली या जयपुर की हलचल से अलग दुनिया रचती हैं। यहां की राजनीति उतनी ही जटिल है, जितनी इसकी भूमि; और उतनी ही संवेदनशील, जितने इसके समुदाय। बाड़मेर में कांग्रेस की हालिया जिला अध्यक्ष नियुक्ति इसी संवेदनशीलता की परीक्षा बनकर उभरी है। बाहर से देखने वाले के लिए यह केवल एक संगठनात्मक फेरबदल प्रतीत हो सकता है, लेकिन स्थानीय समाज के भीतर इसे कहीं गहरे तक असर करने वाली घटना के रूप में महसूस किया जा रहा है। राजनीतिक दलों के लिए अक्सर ऐसे फैसले एक दिन की सुर्खियां और दो दिन का विवाद होते हैं, मगर जमीन पर इसके प्रभाव लंबे समय तक टिकते हैं। यही कारण है कि बाड़मेर का यह विवाद राजस्थान की राजनीति, कांग्रेस की रणनीति और प्रतिनिधित्व के बदलते समीकरणों को नए सिरे से समझने की मांग करता है।

जिला अध्यक्षों की सूची जारी होते ही बाड़मेर में जो प्रतिक्रिया सामने आई, वह राजनीतिक टिप्पणी से परे जाकर सामाजिक असंतोष में बदलती दिखी। गफूर अहमद को पुनः जिला अध्यक्ष न बनाए जाने को मुस्लिम समुदाय ने केवल एक पद परिवर्तन नहीं, बल्कि 'हमारी जगह कौन तय करेगा' वाला बड़ा सवाल माना। यह सवाल यहीं तक सीमित नहीं रहता। यह उन समुदायों में भी गूंज उठता है, जो खुद को संगठनों में पर्याप्त रूप से दिखता तो देखते हैं, सुना जाता नहीं। राजनीतिक दल इन बारीक लेकिन निर्णायक आवाज़ों को जितनी देर में सुनते हैं, उतनी ही मुश्किलें बढ़ती जाती हैं।

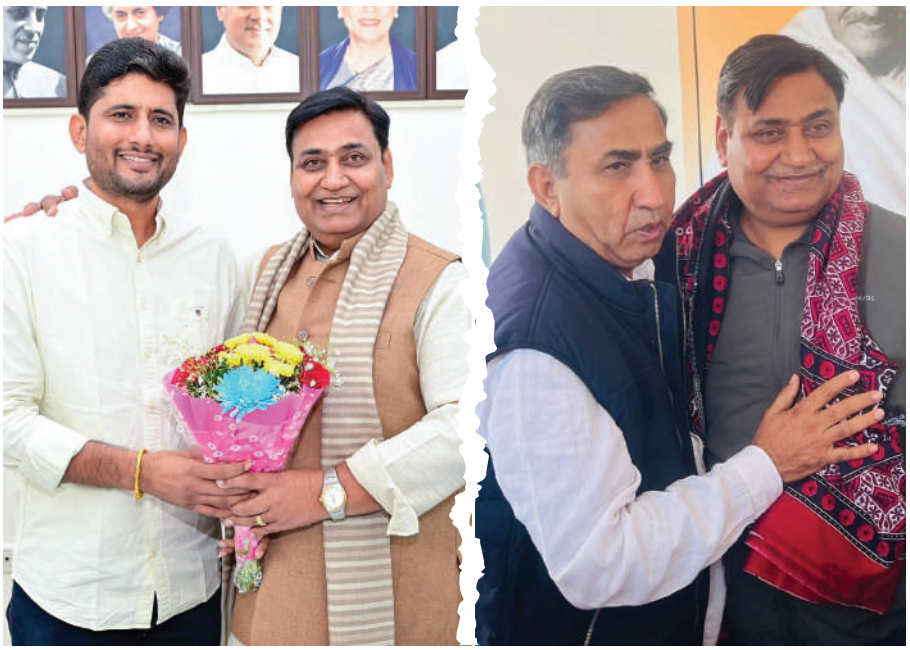

कांग्रेस की ओर से लक्ष्मण सिंह गोदारा की नियुक्ति को स्थानीय समीकरणों का पुनर्संतुलन बताया गया है। नेतृत्व की दृष्टि से यह निर्णय हरीश चौधरी के प्रभाव क्षेत्र, राजनीतिक नेटवर्क और अपनी रणनीतिक सोच से प्रेरित रहा है। किसी भी वरिष्ठ नेता के लिए यह स्वाभाविक है कि वह संगठनात्मक ढांचे में ऐसे व्यक्ति को आगे बढ़ाए, जिस पर उसे भरोसा हो, जिसे वह दिशा दे सके और जिसके माध्यम से वह अपने राजनीतिक प्रभाव को बनाकर रख सके। यह तर्क नेतृत्व की राजनीति में उतना ही पुराना है, जितनी पार्टी संरचनाएं स्वयं। लेकिन संगठन कोई निर्वात में संचालित होने वाली संरचना नहीं है; वह समाज के भीतर ही खड़ा होता है। और समाज उसे केवल एक निर्णय के आधार पर नहीं, बल्कि उस निर्णय के पीछे के संदेश के आधार पर आंकता है।

- मुस्लिम समुदाय की प्रतिक्रिया इस बार केवल भावनात्मक नहीं थी; वह राजनीतिक रूप से विश्लेषणात्मक भी थी। यह समुदाय लंबे समय से कांग्रेस का स्थायी आधार रहा है। विशेषकर पश्चिम राजस्थान में, जहां धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता राजनीतिक निर्णयों में अलग जगह रखती है, वहां मुस्लिम नेतृत्व का कमजोर होना कांग्रेस के लिए चिंताजनक है। गफूर अहमद को अध्यक्ष पद से हटाने के निर्णय ने इस भाव को और तीखा किया है कि कांग्रेस उनके सहयोग को स्वाभाविक मानकर चलती है, लेकिन प्रतिनिधित्व के समय उन्हें दरकिनार कर देती है। राजनीतिक दलों को यह समझना चाहिए कि प्रतिनिधित्व केवल चुनावी गणित का हिस्सा नहीं होता; वह सम्मान और साझेदारी का संकेत भी होता है।
- सोशल मीडिया पर दर्ज हुई सामुदायिक प्रतिक्रियाएं इस बात की पुष्टि हैं कि एक समुदाय स्वयं को केवल संख्या नहीं, बल्कि राजनीतिक साझेदार मानना चाहता है। जब साझेदारी की भावना कमजोर होती है, तो चुनावी निष्ठा भी कमजोर होते देर नहीं लगती।

हरीश चौधरी की राजनीतिक यात्रा और संगठन में उनकी पकड़ किसी से छिपी नहीं है। वे पश्चिम राजस्थान की राजनीति में एक प्रमुख शक्ति केंद्र बन चुके हैं। उनका प्रभाव केवल चुनावी स्थितियों तक सीमित नहीं, बल्कि संगठनात्मक ढांचे को आकार देने तक फैला हुआ है। इसी प्रभाव का उपयोग कर उन्होंने अपने नजदीकी युवा नेता लक्ष्मण गोदारा को जिला अध्यक्ष पद तक पहुंचाया। चौधरी के समर्थकों की दलील है कि बदलते राजनीतिक समय में युवा नेतृत्व को स्थान मिलना चाहिए और यह नियुक्ति उसी दिशा में एक कदम है। इसके अलावा एक तर्क यह भी दिया जा रहा है कि जैसलमेर जिले में जिला अध्यक्ष का दायित्व मुस्लिम समुदाय को दिया गया है, ऐसे में बाड़मेर में गैर मुस्लिम जिला अध्यक्ष का निर्णय सही है।

बाड़मेर में यह नियुक्ति उस समय की गई, जब समुदाय विशेष पहले ही प्रतिनिधित्व को लेकर बेचैनी महसूस कर रहा था। ऐसे समय में किसी अन्य बिरादरी के नेता को आगे लाने से वह बेचैनी असंतोष में बदल गई। लक्ष्मण गोदारा की क्षमता और योग्यता पर चर्चा नहीं है; लेकिन उन्हें लेकर जो प्रतिक्रिया आई, वह दर्शाती है कि नेतृत्व परिवर्तन समाज की भावनाओं से जोड़कर देखना आवश्यक होता है।

संगठनात्मक स्तर पर देखें तो यह निर्णय भविष्य में कांग्रेस के लिए कई जटिलताएं पैदा कर सकता है। राजस्थान में कांग्रेस पहले ही अनेक आंतरिक संघर्षों से गुजर चुकी है। सचिन पायलट और अशोक गहलोत के बीच का विवाद अभी भी पार्टी की स्मृति में ताज़ा है। ऐसे समय में जिला स्तर पर भी असंतोष पैदा होना पार्टी की ऊर्जा को और कमजोर करता है। संगठन की मजबूती का आधार तभी बनता है जब स्थानीय नेता, समुदाय और नेतृत्व एक साझा धारा में बहते दिखाई दें। लेकिन जब इनमें से कोई एक धारा अलग दिशा पकड़ लेती है तो संगठनात्मक ढांचे का तालमेल बिगड़ जाता है।

रही बात गफूर अहमद की, तो उनकी अनदेखी का संदेश केवल राजनीतिक नहीं, सामाजिक भी है। राजनीति में मेहनत और योगदान का महत्व तभी रहता है, जब उसे मान्यता मिलती रहे। बाड़मेर के लोग इस बात को खुलकर कह रहे हैं कि लोकसभा चुनाव में अहमद की भूमिका महत्वपूर्ण थी। उनकी अनुपस्थिति का राजनीतिक नुकसान न केवल पार्टी को होगा, बल्कि उस समुदाय को भी लगेगा कि उनके योगदान को नज़रअंदाज़ कर दिया गया। समुदाय की राजनीति में यह भावना सबसे खतरनाक होती है, क्योंकि यह धीरे-धीरे विश्वास को क्षीण कर देती है।

राजनीतिक दलों को समय रहते ऐसे संकेतों को समझना चाहिए। विशेषकर कांग्रेस, जो प्रतिनिधित्व और विविधता की राजनीति को अपने वैचारिक आधार के रूप में पेश करती है, उसे यह संदेह भी नहीं बनने देना चाहिए कि वह किसी समुदाय की अनदेखी कर रही है। प्रतिनिधित्व की राजनीति में देरी, कमजोर संदेश और गलत समय पर किए गए निर्णय पार्टी के लिए लंबी दूरी के परिणाम पैदा करते हैं। राजस्थान जैसे राज्य में, जहां जातीय संतुलन चुनावी परिणाम को गहराई से प्रभावित करता है, यह संवेदनशीलता और महत्व रखती है। जब बात मुस्लिम समुदाय की आती है तो यह महत्व और बढ़ जाता है क्योंकि यह समुदाय कांग्रेस के साथ वर्षों से वैचारिक और भावनात्मक निष्ठा रखता आया है।

- बाड़मेर की राजनीति केवल क्षेत्रीय समीकरणों का मामला नहीं है; यह राजस्थान के बड़े राजनीतिक मानचित्र का हिस्सा है। यहां की छोटी घटनाएं अक्सर बड़े संकेत देती हैं।

- इस विवाद को केवल पद-व्यवस्था या संगठनात्मक फेरबदल के चश्मे से देखने की भूल नहीं करनी चाहिए। यह प्रतिनिधित्व, पहचान, सामुदायिक सम्मान और आंतरिक संरचना में संतुलन का सवाल है। कांग्रेस को यह समझना होगा कि किसी समुदाय की नाराज़गी केवल वोटों तक सीमित नहीं होती; वह पार्टी के प्रति उस समुदाय की धारणाओं को बदल देती है, और धारणाओं में बदलाव कहीं अधिक स्थायी होता है।

- राजनीति में विश्वास टूटने की आवाज़ बहुत धीमी होती है, पर उसके प्रभाव तेज़ होते हैं। बाड़मेर में इस समय जो नाराज़गी है, वह उसी विश्वास के टूटने का संकेत है। कांग्रेस यदि इसे गंभीरता से लेती है तो स्थिति सुधर सकती है; लेकिन यदि इसे केवल "संगठनात्मक निर्णय" कहकर टाल दिया गया, तो इसके दुष्परिणाम आने वाले वर्षों तक पार्टी को भुगतने पड़ सकते हैं।
- और अंत में यह याद रखना आवश्यक है कि राजनीति में सही या गलत का निर्णय केवल नेतृत्व नहीं करता; समाज करता है। नेतृत्व निर्णय लेता है, पर समाज उसकी व्याख्या करता है। बाड़मेर के समाज ने इस निर्णय की जो व्याख्या की है, वह कांग्रेस के लिए चेतावनी है। राजनीति में चेतावनियां तभी उपयोगी होती हैं जब उन्हें सुना जाए। देर हो जाने पर वे इतिहास बन जाती हैं और राजनीति में जो इतिहास बन जाता है, उसे बदलने में पीढ़ियां लग जाती हैं।

गहरी राजनीतिक चूक के संकेत

बाड़मेर जिला कांग्रेस अध्यक्ष की नियुक्ति ने जिस तरह सामाजिक असंतोष को जन्म दिया है, वह महज़ संगठनात्मक निर्णय नहीं, एक गहरी राजनीतिक चूक का संकेत है। कांग्रेस यदि प्रतिनिधित्व को अपनी वैचारिक पहचान बताती है, तो उसे यह भी समझना होगा कि समुदाय सम्मान और साझेदारी की प्रतीकात्मकता को बेहद गंभीरता से लेते हैं। गफूर अहमद की अनदेखी ने मुस्लिम समुदाय में भरोसे की दरार पैदा की है, जिसे हल्का समझना पार्टी के लिए भारी गलती होगी। राजनीति में समय पर किया गया संवाद और संवेदनशील निर्णय ही विश्वास को बचाते हैं—और बाड़मेर की यह घटना कांग्रेस के लिए उसी खोते हुए विश्वास की साफ चेतावनी है।

मंत्री के क्षेत्र में ही पंचायत समिति गायब

फिर ठगा गया कालंद्री

राज्यमंत्री ओटाराम देवासी अपने ही क्षेत्र कालंद्री को पंचायत समिति नहीं दिला सके, जबकि भावरी और मंडार को नई समितियाँ मिल गईं। मजबूत दावेदारी होने के बावजूद कालंद्री को बाहर रखे जाने से मंत्री की राजनीतिक प्रभावशीलता पर गंभीर सवाल खड़े हुए हैं।

गणपत सिंह माण्डोली
✍ वरिष्ठ पत्रकार

चुनाव में करीब 36 हजार मतों से प्रचंड जीत हासिल कर सिरोही से विधानसभा तक पहुंचे ओटाराम देवासी को राज्यमंत्री का दर्जा मिला। सिरोही के लिए यह गौरवपूर्ण क्षण रहा कि उनके विधायक अब राज्यमंत्री है। कई महत्वपूर्ण विभागों के साथ ही उन्हें पंचायतराज भी दिया गया। लेकिन, वे जनता की उम्मीदों पर खरा नहीं उतर रहे। पता नहीं राज्यमंत्री होते हुए भी मंत्रालय में उनकी चलती नहीं या शायद वे करना ही नहीं चाहते। चाहे जो हो, लेकिन सिरोही विधानसभा क्षेत्र के लोगों को इस बार भी निराशा ही हाथ लगी।

हाल ही में पंचायतों का परिसीमन किया गया है। इसके तहत कई नई पंचायतें व पंचायत समितियों का गठन किया गया। सिरोही विधानसभा क्षेत्र में कालन्द्री को पंचायत समिति मिलने की उम्मीद थी। लोग इसके लिए अर्से से प्रयासरत भी थे, लेकिन पंचायतराज राज्यमंत्री के क्षेत्र की यह पंचायत ग्राम पंचायत ही रह गई। जिले के पिण्डवाड़ा-आबू व रेवदर क्षेत्र को एक-एक पंचायत समिति मिल गई, लेकिन राज्यमंत्री का क्षेत्र कोरा रह गया। पिण्डवाड़ा में भावरी व रेवदर में मंडार पंचायतों को समिति की सौगात मिली।

हाल ही में सरकार की ओर से जारी अधिसूचना में भावरी और मंडार को नई पंचायत समितियों का दर्जा दे दिया गया है, लेकिन कालंद्री का नाम सूची से बाहर रहा। विभाग के राज्यमंत्री होने के बावजूद ओटाराम देवासी अपने क्षेत्र को पंचायत समिति नहीं दिला सके। राजनीतिक गलियारों में चर्चा तेज है कि आखिरी दौर में ऐसा कौनसा दबाव या ताकत का उपयोग हुआ कि कालंद्री को समिति नहीं मिल पाई। जनसंख्या, भौगोलिक स्थिति और प्रशासनिक आवश्यकता के आधार पर कालंद्री को मजबूत दावेदार माना जा रहा था, लेकिन ऐसा नहीं हो पाया।

जनता में अब नाराजगी तो रहेगी ही

उधर, रेवदर क्षेत्र के मंडार को लगातार दो सौगात मिल गई। मंडार को पहले ग्राम पंचायत से नगर पालिका बना दिया गया और अब पंचायत समिति भी बन गई। अब यह कहना मुश्किल है कि इसमें पूर्व विधायक जगसीराम कोली की कोई करामात काम कर गई या फिलवक्त के कांग्रेस से विधायक मोतीलाल कोली का कारनामा।

वहीं, पिण्डवाड़ा विधायक समाराम गरासिया भी अपने क्षेत्र में भावरी को पंचायत समिति बनवाने में सफल रहे। ऐसे में पंचायतराज राज्यमंत्री के गृह क्षेत्र से मजबूत दावेदार कालन्द्री को पंचायत समिति का दर्जा नहीं मिलने से स्थानीय लोगों और भाजपा कार्यकर्ताओं में नाराजगी तो रहेगी ही।

प्रमोशन मिले या न मिले पर डिमोशन करवा दिया

- ऐसा भी नहीं है कि पंचायतराज राज्यमंत्री ने अपने क्षेत्र में कोई काम न किया हो। वे जावाल नगर पालिका को वापस ग्राम पंचायत के रूप में तब्दील करवा चुके हैं। अब प्रमोशन हो या डिमोशन यह दीगर बात है। पिछली सरकार ने जावाल ग्राम पंचायत को नगर पालिका के रूप में प्रमोट किया था। इसके बाद यहां शहरी क्षेत्र की तरह कार्य होते रहे, लेकिन भाजपा ने सत्ता में आते ही पहला काम जावाल को वापस पंचायत बनाने का ही किया। यह राज्यमंत्री ओटाराम देवासी का ही क्षेत्र है तथा पालिका से पंचायत में डिमोशन होने सम्बंधी बधाइयों के दौर भी खूब चलाए गए।
- खैर, जो भी हो जावाल का प्रकरण देखा जाए तो यही लगता है कि पंचायतराज राज्यमंत्री अपने क्षेत्र की पंचायतों का प्रमोशन कर समितियां बनाने में भागीदारी निभाए या न निभाए पर यह जरूर है कि वे पालिकाओं को भी ग्राम पंचायत में तब्दील जरूर करवा सकते हैं।

अपनी विधानसभा में नहीं दिला पाए समिति

■ पंचायत समितियों का गठन सिर्फ प्रशासनिक फेरबदल नहीं अपितू स्थानीय शक्ति, संतुलन व जनप्रतिनिधियों की पकड़ और सरकार के भीतर उनकी वास्तविक हैसियत का आईना है।

■ राज्यमंत्री ओटाराम देवासी के क्षेत्र की कालंद्री इस सूची से बाहर रह गई। यह बात सिर्फ एक नाम छूटने भर की नहीं है यह मंत्री की राजनीतिक प्रभावशीलता पर सीधे सवाल खड़े करती है। सबसे बड़ा विरोधाभास यही है कि पंचायतराज विभाग के राज्यमंत्री होने के बावजूद ओटाराम देवासी अपने ही विधानसभा क्षेत्र को पंचायत समिति नहीं दिला पाए।

■ यह बात किसी से छिपी नहीं कि कालंद्री जनसंख्या, भौगोलिक फैलाव और प्रशासनिक दृष्टि से एक स्वाभाविक इकाई बन चुकी है। आसपास की ग्राम पंचायतों के साथ इसकी दूरी कम है। स्थानीय बाजार बड़ा है और सरकारी विभागों की पहुंच व गतिविधियां पहले से ही इसे एक उप क्षेत्रीय केंद्र बनाती है।

■ जनसंख्या की दृष्टि से भावरी व मंडार की तुलना में कालंद्री बराबरी पर या कई जगह बेहतर स्थिति में है। भौगोलिक स्थिति व प्रशासनिक आवश्यकता के लिहाज से भी कालंद्री बेहतर स्थिति में है। इन तथ्यों के आधार पर स्थानीय लोगों ने सूची में कालंद्री का नाम तय माना था।

मुंहबायें खड़े हैं सवाल, जो जवाब मांग रहे

■ यहां यह स्पष्ट दिखता है कि मुद्दा पार्टी का नहीं बल्कि राजनीतिक सक्रियता, लॉबिंग और प्रभाव का है। राजनीति में अक्सर ऐसे निर्णय संतुलन के नाम पर किए जाते हैं। कौन नेता मजबूत हो रहा है, किसे कितना देना है या किसे कितना रोकना है। कालंद्री को समिति नहीं बनाने के पीछे भी कमोबेश ऐसे ही किसी संतुलन का खेल नजर आता है। सवाल तो यह भी है कि रेवदर में मंडार को समिति देकर सरकार ने जहां कांग्रेस विधायक के लिए रास्ता खोल दिया, वहीं भाजपा में अपने ही विभाग के राज्यमंत्री के लिए रास्ता संकुचित कर दिया तो आखिर क्यों।

■ सवाल कुछ ये भी कि आखिरी समय में कालंद्री की फाइल रोक दी गई अथवा कोई और क्षेत्रीय दबाव था या जानबूझकर सूची से नाम हटाया गया। ये सभी सवाल मुंहबायें खड़े हैं। स्थानीय लोगों का आरोप है कि आसपास के प्रभावशाली नेता नहीं चाहते कि कालंद्री को समिति का दर्जा मिले, क्योंकि इससे स्थानीय शक्ति समीकरण बदलते हैं। कुछ का मानना है कि राज्यमंत्री के अपने ही संगठनात्मक रिश्ते कमजोर थे इसलिए उनकी मांग आगे नहीं बढ़ी। वैसे इन आरोपों की पुष्टि कोई खुलकर नहीं करता और यही राजनीति का धुंधला सच है।

वैसे सूत्र बताते हैं कि प्रस्ताव की प्रारंभिक प्रक्रिया में कालंद्री का नाम शामिल था और अधिकारी स्तर पर इसे मजबूत माना गया। परन्तु अंतिम अधिसूचना में नाम गायब होना राजनीतिक हस्तक्षेप का परिणाम ही प्रतीत होता है।

टी-20 की तेज आंधी में क्रिकेट की आत्मा का संघर्ष

टेस्ट क्रिकेट की डगमगाती दीवार

टेस्ट क्रिकेट कभी पांच दिन की मानसिक साधना हुआ करता था, जहां बल्लेबाज घंटों क्रीज पर डटे रहते थे और गेंदबाज रणनीति से मुकाबला जीतते थे। आज वही प्रारूप दो दिन, तीन दिन में खत्म हो रहा है। टी ट्वेंटी की रफ्तार से खेल का रोमांच भले ही बढ़ रहा हो, लेकिन खिलाड़ियों की तकनीक और धैर्य दोनों क्षीण हो रहे हैं, जिससे क्रिकेट की आत्मा पर गंभीर खतरा मंडरा रहा है।

अजय अस्थाना
वरिष्ठ पत्रकार

टेस्ट क्रिकेट की पहली सांस उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में तब फूटी थी, जब इंग्लैंड और ऑस्ट्रेलिया के बीच पांच दिनों तक चलने वाला मुकाबला खेल की सर्वोच्च परीक्षा माना जाता था। तब क्रिकेट केवल खेल नहीं था, बल्कि धैर्य की साधना था। पांच दिन का समय मानो दो टीमों के बीच मानसिक शक्ति के मंथन का काल होता था और कई बार यह पांच दिन भी कम पड़ जाते थे, क्योंकि टीमों के पास अपने खेल को आकार देने के लिए समय ही समय होता था। मैच ड्रॉ हो जाना सामान्य बात थी और दर्शक भी इस लंबी प्रक्रिया का आनंद लेते थे।

आज स्थिति उलट चुकी है। भारत और दक्षिण अफ्रीका के बीच हाल में खेला गया एक टेस्ट मुकाबला दो दिन में समाप्त हो गया। इंग्लैंड और ऑस्ट्रेलिया की ऐशेज जैसी दुनिया की सबसे प्रतिष्ठित टेस्ट सीरीज में भी कई मैच मुश्किल से तीसरे दिन तक पहुंच पाए। यह वही प्रारूप है जिसके बारे में कहा जाता था कि पांच दिन भी कम पड़ते हैं, लेकिन अब दो दिन, तीन दिन में नतीजे निकले रहे हैं। इससे लगता है जैसे कहीं न कहीं क्रिकेट की आत्मा में कुछ टूट रहा है।

इसी संदर्भ में हाल ही में सम्पन्न भारत- दक्षिण अफ्रीका टेस्ट शृंखला से यह चिंता और गहरा गई है। पहला टेस्ट बुरी तरह हारने के बाद दूसरे टेस्ट में भी भारत को चार सौ से अधिक रन के हार झेलनी पड़ी। बल्लेबाज और गेंदबाज दोनों अपने सर्वोत्तम प्रदर्शन से दूर दिखाई दिए। भारतीय बल्लेबाजी दोनों पारियों में लड़खड़ा गई और गेंदबाज भी दक्षिण अफ्रीका की लय तोड़ने में असफल रहे। यह हार सिर्फ एक पराजय नहीं, बल्कि संकेत है कि टेस्ट मानसिकता की कमी अब परिणामों को भी असामान्य रूप से प्रभावित कर रही है।

टेस्ट क्रिकेट के वो स्वर्णिम दिन

टेस्ट क्रिकेट का स्वर्ण काल वह दौर था जब बल्लेबाज सिर्फ रन नहीं बनाते थे, बल्कि गेंदबाज के मन में भय भी पैदा करते थे। दिलीप वेंगसरकर का क्रीज पर डटकर खड़ा रहना आधुनिक क्रिकेट में दुर्लभ दृश्य बन चुका है। गुंडप्पा विश्वनाथ की सहज कला, सुनील गावस्कर का धैर्य, सचिन तेंदुलकर की तकनीक, राहुल द्रविड़ की चट्टान जैसी स्थिरता, वीवीएस लक्ष्मण की सत्रों तक पसीना छुड़ा देने वाली बल्लेबाजी, ये सब गुण उस समय की मानसिकता को दर्शाते थे। बल्लेबाज का लक्ष्य था कि वह गेंदबाज को थकाए, उसकी रणनीति को तोड़े और धीरे- धीरे मैच को अपने कब्जे में ले। कई विदेशी दिग्गज भी टेस्ट क्रिकेट को लंबी लड़ाई की तरह खेलते थे। डेविड बून का जिद्दी ठहराव, डेविड गोवर की शालीनता और गॉर्डन ग्रीनिज की दहाड़ गेंदबाजों में डर पैदा कर देती थी। यह वह युग था जब बल्लेबाज क्रीज को किला मानकर खड़े रहते थे। मैच की दिशा अक्सर उसी बल्लेबाज के इर्द गिर्द तय होती थी, जो क्रीज पर सबसे ज्यादा देर ठहर जाता था। टेस्ट क्रिकेट का पूरा ढांचा ही पांच दिन की धीमी और स्थिर रणनीति पर आधारित था। पहला दिन विकेट का आकलन, दूसरा दिन पारी को आकार देना, तीसरे दिन मैच का संतुलन बदलना, चौथे दिन बढ़त मजबूत करना और पांचवें दिन परिणाम की तलाश। हर दिन का अपना अर्थ था और हर सत्र अपने आप में नई कहानी लेकर आता था।

सोच ही बदल दी टी-20 युग ने

- लेकिन टी-20 युग के आगमन के साथ क्रिकेट की सोच बदल गई। अब बल्लेबाज के मन में धैर्य की जगह त्वरित आक्रमण की प्रवृत्ति हावी हो गई है। खिलाड़ी क्रीज पर आते ही बड़े शॉट खेलने के लिए उतावले दिखाई देते हैं। टी-20 की लोकप्रियता ने खेल की तकनीक को गति की दिशा में मोड़ दिया है। तकनीक व मानसिकता बदली तो स्वभाव भी बदल गया। अब बल्लेबाज का प्राथमिक लक्ष्य टिकना नहीं, बल्कि जोरदार शुरुआत करना होता है और यही मानसिकता टेस्ट क्रिकेट को अंदर से घुन की तरह खा रही है।
- आज की पीढ़ी के खिलाड़ी लगातार तेज क्रिकेट खेलने के अभ्यस्त हैं। वे अपने बचपन से लेकर पेशेवर स्तर तक सीमित ओवरों के अनेक प्रारूप खेलते आए हैं, जहां हर गेंद पर रन बनाने का दबाव उनके अवचेतन में अंकित हो चुका है। उन्हें लंबा खेलने की मानसिक आदत बनी ही नहीं है। बल्लेबाजी के पुराने गुर जैसे गेंद छोड़ देना, क्रीज पर खुद को सेट करना, गेंदबाज की लय को बिगाड़ना, स्पिन की दिशा पढ़ना और स्विंग की धार समझना, इन सब कौशल की आवश्यकता ही कम हो गई है। यही कारण है कि टेस्ट जैसे धैर्य प्रधान प्रारूप में जब वे खेलते हैं तो अक्सर जल्दबाजी में विकेट गंवा बैठते हैं।

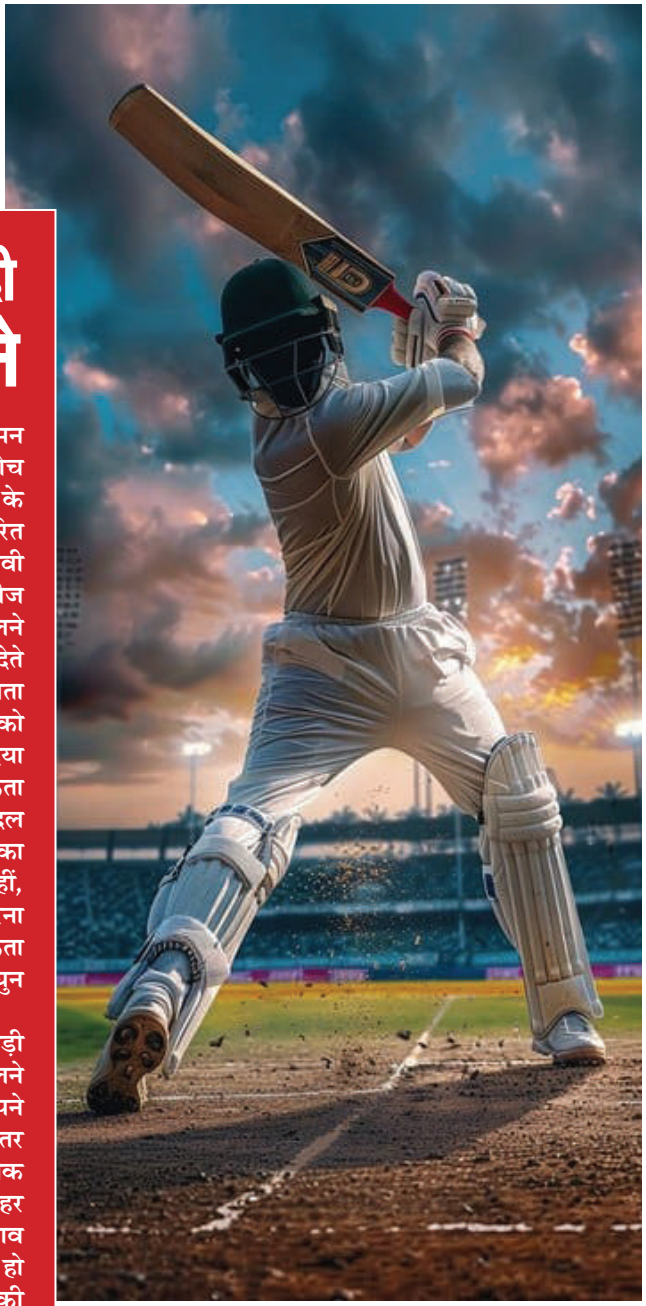

"टेस्ट क्रिकेट आज सबसे कठिन मोड़ पर खड़ा है। एक तरफ तेज रफ्तार का आकर्षण है और दूसरी तरफ खेल की वह गहरी आत्मा जो पांच दिन की साधना में प्रकट होती है। यदि संतुलन नहीं साधा गया तो भविष्य में टेस्ट क्रिकेट का सूरज धुंधला पड़ सकता है और यह खेल अपनी गहराई खो देगा।"

व्यस्त कैलेण्डर व तेज पिचें भी कम घातक नहीं

तेज पिचें और व्यस्त कैलेण्डर भी इस समस्या को बढ़ा रहे हैं। क्रिकेट बोर्ड सीमित ओवरों की सीरीज को ज्यादा प्राथमिकता देते हैं, क्योंकि इनसे आर्थिक लाभ अधिक होता है। खिलाड़ी भी फ्रेंचाइजी क्रिकेट में अधिक समय बिताते हैं, जिससे तकनीकी कमियों पर ध्यान देने का समय कम मिलता है। गेंदबाजों की रफ्तार जरूर बढ़ गई है, लेकिन बल्लेबाजों की मानसिक मजबूती प्रायः नजर नहीं आ रही।

टेस्ट मैचों का दो- तीन दिन में सिमट जाना, केवल बल्लेबाजों के कारण नहीं है बल्कि गेंदबाज भी अब टेस्ट की रणनीति से हटकर सीमित ओवरों की तेज धार का प्रयोग अधिक करते हैं। पहले गेंदबाज बल्लेबाज को थकाने के लिए लंबे स्पेल फेंकते थे, फील्ड सेटिंग सूक्ष्म होती थी और बल्लेबाज को गलती करवाने की प्रक्रिया धीरे- धीरे बनाई जाती थी। आज के गेंदबाज भी वही धमाकेदार परिणाम जल्दी चाहते हैं जो टी-20 में मिल जाते हैं। इस कारण टेस्ट में आवश्यक रणनीतिक विस्तार कम हो गया है।

पुराने समय के टेस्ट मैच कहीं अधिक धीमे खेल जाते थे। कई बार पांच दिन में तीन पारियां भी पूरी नहीं हो पाती थीं। दोनों टीमों को दो- दो पारियां मिलती थीं, लेकिन अक्सर मैच ड्रॉ पर समाप्त होता था। यह ड्रॉ उस समय विफलता नहीं, बल्कि कौशल की गहराई का प्रतीक माना जाता था। दर्शक हार-जीत की आकांक्षा के बजाए पांच दिन तक खेल की कलात्मकता का आनंद लेते थे।

आज परिणाम जल्दी मिल रहे हैं, लेकिन यह उतावलापन टेस्ट क्रिकेट की आत्मा को खरोंच रहा है। केवल मनोरंजन की भूख और व्यावसायिक दबावों ने इस प्रारूप को भारी क्षति पहुंचाई है। टेस्ट क्रिकेट का मतलब हमेशा से रहा है कि कौन खिलाड़ी पांच दिन तक मानसिक रूप से टिक सकता है, कौन टीम लंबे प्रारूप में रणनीति को आकार दे सकती है और कौन गेंदबाज बल्लेबाज की एक छोटी सी गलती को पहचानकर मैच की दिशा बदल सकता है।

अब सवाल यह है कि क्या टेस्ट क्रिकेट का भविष्य सुरक्षित है? दर्शकों की संख्या घट रही है, मनोरंजन का स्वरूप बदल चुका है, युवा वर्ग तेजी और शक्ति से भरे खेलों की ओर आकर्षित है और क्रिकेट बोर्ड भी अधिकतर तात्कालिक लाभ की ओर झुक रहे हैं। अगर यही रफ्तार जारी रही तो वह दौर दूर नहीं जब टेस्ट मैच केवल इतिहास की पुस्तक का हिस्सा बनकर रह जाए।

हमें यह स्वीकार करना होगा कि टेस्ट क्रिकेट केवल प्रारूप नहीं है बल्कि क्रिकेट की आत्मा है। यह वही मैदान है, जहां तकनीक का कठोर परीक्षण होता है, जहां मानसिक शक्ति का असली मूल्यांकन होता है और जहां खिलाड़ी अपने चरम कौशल के साथ खेल की कहानी लिखते हैं। अगर इस प्रारूप का अस्तित्व कमजोर हुआ तो क्रिकेट की गहराई भी कमजोर हो जाएगी।

आवश्यक यह है कि खिलाड़ियों को टेस्ट मानसिकता की ट्रेनिंग दी जाए व पिचों को संतुलित बनाया जाए। कैलेण्डर ऐसा बने कि खिलाड़ी पांच दिन के प्रारूप के अनुरूप तैयारी कर सकें और क्रिकेट बोर्ड टेस्ट मैचों को वह सम्मान दें जो इस प्रारूप का मूल स्वभाव है।

आलोचक का दृष्टिकोण और कविता का सत्य

दिनेश सिंदल
कवि, लेखक

कविता केवल शब्दों का संग्रह नहीं, भाव जगत का अनुभव है। आलोचक रचना के बाहर खड़ा है। वह रचना को बुद्धि से समझता है, भाव जगत में रचना के सत्य तक पहुंच पाना उसके लिए कठिन है। यह आलेख रचना और आलोचना के अंतर्संबंध को उजागर करता है, बताता है कि रचनाकार का ज्ञान कुएं के जल की तरह स्वतः प्रस्फुटित होता है। एकदम ताजा, नित नूतन एवं गहरा। जबकि आलोचक का ज्ञान हौज के पानी की तरह बाहर से लाया गया, जो कुछ समय बाद सड़ने भी लगता है।

डाकिए के थैले में बहुत तरह के पत्र होते हैं। मिलन के, वियोग के, सुख के, दुख के, प्रेम-पत्र और मनी- ऑर्डर भी होते हैं। उसका काम सबको बांटना है। उन पत्रों के प्रेम, सुख- दुख से डाकिया प्रभावित नहीं होता। उसके पास रखे मनी- ऑर्डर में से एक पैसा भी उसका नहीं होता। आलोचक का काम भी लगभग डाकिए जैसा है। इधर-उधर की किताबों से आया ज्ञान यानी कि उधार का ज्ञान बांटना। वह बुद्धि से सुनता है, हृदय से नहीं। आलोचक का ज्ञान भी ऐसा ही है।

बुद्धि से सुनने/पढ़ने वाला रचना की अच्छी व्याख्या तो कर सकता है, उसके अर्थ दूसरों को समझा भी सकता है, किंतु उस रचना को पढ़ कर वह स्वयं रूपांतरित नहीं हो सकता। हृदय से सुनने वाला उसके भाव में बहकर रूपांतरित हो सकता है, किंतु वह समझा नहीं सकता। अपने इस अनुभव को दूसरों तक नहीं पहुंच पाता।

एक बार चार्ली चैपलिन ने कहा था कि कविता दुनिया को लिखे गए खूबसूरत प्रेम- पत्र की तरह होती है। ठीक ही कहा था। कविता मन की तरंग की तरह होती है। हम जिस तरह से प्रेम- पत्र में खामियां नहीं ढूंढते, बल्कि पत्र के भीतर हर एक शब्द में पिरोए खूबसूरत अहसास और उसमें महकती प्रेम की गहराई को महसूस करते हैं। वही बात कविता पर भी लागू होती है। कविता मेरे लिए किसी आलोचना से परे होती है। जब हम कहते हैं कि सभी का अनुभूत सत्य अलग है। उसका निजी है। सवाल ये उठता है कि फिर रचनाकार के सत्य तक आलोचक कैसे पहुंचता है? कविता को कविता की तरह स्वीकार किया जाना चाहिए और उसका स्वागत किया जाना चाहिए।

आलोचक कविता को तर्क से पकड़ना चाहता है, किंतु कविता को कसकर पकड़ा नहीं जा सकता। जिस तरह फूल को आप जितना कस कर पकड़ोगे, उसका सौंदर्य नष्ट हो जाएगा। ठीक उसी तरह कविता को भी आप तर्कों के तराजू में मत तोलो, उसे महसूस करो।

एक होता है हौज। एक होता है कुआं। हौज को बाहर से पत्थर, गारा, मिट्टी लाकर दीवारें चुन कर बनाया जाता है। फिर उसमें बाहर से पानी लाकर डाला जाता है। वो उसका स्वयं का पानी नहीं होता। कुएं के लिए हम कंकड़, पत्थर, मिट्टी बाहर निकालते हैं। तब उसमें जल का सोता स्वतः फूटता है। कुएं का जल उसके भीतर से निकला जल होता है।

ज्ञान भी दो तरह का होता है। एक हौज के जल की तरह, एक कुएं के जल की तरह। आलोचक के पास हौज के जल वाला ज्ञान होता है। जो कुछ समय बाद सड़ने भी लगता है। रचनाकार के पास कुएं के जल की तरह का ज्ञान होता है जो उसके भीतर से प्रस्फुटित होता है। एकदम ताजा, नित नूतन एवं अनंत संभावनाओं वाला। आलोचक का ज्ञान उधार का ज्ञान है, रचनाकार का ज्ञान उसका आत्मबोध है। आलोचक के पास एक और एक मिलकर दो होते हैं, किंतु रचनाकार के पास एक और एक मिलकर ग्यारह भी हो सकते हैं। ये संभावनाएं ही रचनाकार व रचना के प्रति आकर्षण पैदा करती है। उसे नित नूतन रखती है। उसे बासी नहीं होने देती।

एक साधारण मनुष्य अपने जगत को ज्ञानेंद्रिय के माध्यम से जानता है। किसी वस्तु के संपर्क में आने पर उसकी ज्ञानेंद्रिय प्रतिक्रिया व्यक्त करती है, संवेदित होती हैं। यह संवेदना उसे उद्वेलित करती है और उस वस्तु के प्रति एक प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। या कहे की भाव उत्पन्न होता है। यानी कि भाव इस भौतिक जगत के प्रति व्यक्ति की सबसे पहली प्रमाणिक प्रतिक्रिया है। जिसका कोई आकार नहीं है, रूप नहीं है। कवि भाव की उस आरंभिक अवस्था को जानता है।

एक कवि के लिए विचारधारा से बड़ा दर्शन है और दर्शन से भी बड़ी है जीवन दृष्टि, जो हर कवि को आमद करनी होती है। कविता के लिए विचार, विचारधारा, दर्शन यह सभी बाहरी उपकरण है। अच्छी कविता सभी विचारधाराओं का अतिक्रमण करती है। प्रगतिवाद, पूंजीवाद, गांधीवाद, धर्म, जाति, नस्ल से परे वह सीधे जीवन से जोड़ती है। जीवन की घटना महत्वपूर्ण है। इसे नियंत्रित करने वाले नियम नहीं है।

कविता मुख्य रूप से भावों का खेल है। भावों से बनी व हृदय को संबोधित कविता के पास हम विचारों के लिए नहीं जाते। विचार तो दूसरी जगह पर ज्यादा प्रभावशाली व स्पष्ट मिल जाएंगे। कविता में और कला में भाव ही प्रधान होते हैं। अगर ऐसा नहीं होता तो सारे विचारक बड़े कवि हो जाते। कविता भावों का भूगोल है। अनेक भाव अकेले या एक दूसरे के साथ मिलकर व्यक्ति के आंतरिक जीवन को या व्यक्तियों के परस्पर संबंधों को उद्घाटित करते हैं।

जैसे अचानक हमारी दृष्टि किसी ऐसे फूल पर पड़े जैसा हमने पहले कभी नहीं देखा हो, तो उसे देखते ही हम अवाक रह जाते हैं। कुछ पल तक विचार शून्य होकर उसे देखते रहते हैं। यह भाव की स्थिति है। उसके बाद उसका रंग, उसका आकार, उसकी खुशबू से हमारा सरोकार होता है। यही से विचार पैदा होता है। यह कुछ समय अचानक देख कर अवाक हो जाना यह भाव की दशा है। विचार की यात्रा बाद में शुरू होती है। वह वस्तु मेरे लिए कितनी उपयोगी है। समाज के लिए कितनी उपयोगी है। कौन से नैतिक मूल्यों की स्थापना करेगी इत्यादि।

साहित्य का अवमूल्यन

यह समझना और समझाना, की रचना में क्या कहा गया है? कैसे कहा गया है? और उसका समाज, साहित्य या जीवन से क्या संबंध है? यह काम तो आलोचक कर सकता है, लेकिन क्या वह रचना के सत्य तक पहुंच सकता है? क्योंकि रचना का सत्य केवल एक तथ्य नहीं होता। वह लेखक के अनुभव, संवेदना और कल्पना का मिश्रित रूप होता है।

आलोचक रचना का पाठक भी है और व्याख्याकार भी। वह रचना के बाहर खड़ा होकर उसे देखने की कोशिश करता है। इसीलिए वह रचना के पूर्ण सत्य तक नहीं पहुंच सकता। वह रचना के संभावित सत्यों का अनावरण कर सकता है।

साथ ही हर आलोचक का दृष्टिकोण अलग होता है। किसी का सामाजिक, किसी का मनोवैज्ञानिक, किसी का दार्शनिक, इसीलिए रचना का सत्य बहुत स्तरीय प्रतीत होता है। जो सत्य एक आलोचक को दिखता है वह दूसरे को भी दिखे, यह जरूरी नहीं।

राजाओं का उजाला चेरा राजा की कविताओं में
आलोचक ने चित्र उकेरा राजा की कविताओं में
सत्ताओं के नियम-कायदे रहे मछलियों के प्रतिकूल
और सुविधा में रहा मछेरा राजा की कविताओं में

प्रिंस चार्ल्स–डायना की वेडिंग ऑफ़ द सेंचुरी भी पड़ी फीकी

राजघराने 'आम', तो 'आम' हुए राजसी

हाल ही उदयपुर में हुई रॉयल डेस्टिनेशन वेडिंग की चर्चा दुनिया भर में छायी रही। इसे इस साल की सबसे बड़ी शादी करार दिया गया है। इसमें अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के बेटे जूनियर ट्रंप अपनी गर्लफ्रेंड सहित पहुंचे तो वहीं जेनिफर लोपेज, जस्टिन बीबर और कई हॉलीवुड—बॉलीवुड सेलिब्रिटीज ने परफॉर्म किया। अब 2026 में एक्टर रश्मिका मंधाना और विजय देवराकोंडा की डेस्टिनेशन वेडिंग का वेन्यू भी उदयपुर ही है, ऐसे में ये शादी भी पहले से ही चर्चा में आ चुकी है। एक के बाद एक हो रही इन शादियों ने उदयपुर समेत पूरे राजस्थान को ग्लोबल डेस्टिनेशन वेडिंग हब बना दिया है।

मधुलिका सिंह ✍
वरिष्ठ पत्रकार

आज जब शादियों की बात होती है तो हर परिवार की चाहत डेस्टिनेशन वेडिंग की चमक, रॉयल वेडिंग की आभा और बिग फैट इंडियन वेडिंग के शाही ठाठ के आसपास घूमती है। पिछले एक दशक में विवाह सिर्फ एक पारिवारिक अनुष्ठान नहीं रहा, अब यह अरबों रुपए की उभरती हुई इंडस्ट्री में बदल चुका है जहां हर रस्म एक अनुभव है और हर पल एक यादगार फ्रेम। लेकिन शादी की इस विलासिता का बीज आज नहीं पड़ा। राजस्थान की धरती इस वैभव की असली जननी है जहां सदियों पहले राजा-महाराणाओं की शादियां विलासिता का पर्याय हुआ करती थीं। अब राजशाही भले ही इतिहास के पन्नों में सिमट गई हो पर उस वैभव की चमक आज भी फीकी नहीं पड़ी।

अब फर्क सिर्फ इतना है कि पहले राजघराने आम को चकित करते थे और आज आम लोग खुद को शाही महसूस करने की चाहत में असाधारण अनुभव गढ़ रहे हैं। महल अब होटल बन चुके हैं, बारातें फ्लाइटों में उड़कर आती हैं और शादियां हैशटैग्स में अमर हो रही हैं। आम शादियों से डेस्टिनेशन, रॉयल और बिग फैट वेडिंग में तब्दील होती इन्हीं शादियों के इतिहास और इनके भविष्य पर एक विशेष रिपोर्ट —

कभी केवल राजा-महाराणा करते थे शाही शादियां

राजस्थान के इतिहास में राजा-महाराणाओं की शादियां भव्य उत्सव हुआ करती थी जो केवल कुछ दिनों का नहीं बल्कि महीने भर का आयोजन होता था। उंचे—उंचे किलों में रोशनी की जगमगाहट आसपास के कई गांवों को जगमगा देती थी, नगाड़ों का शोर शुभ विवाह की बात बयां कर देता था, आतिशबाजी भी एक अलग चमक बिखेरती थी तो दूल्हे का हाथी पर आगमन, शाही बारात में ऊंट, घोड़े, सैनिक और शाही भोज में लज़ीज खाने जैसे तमाम आकर्षण इसे और भव्य रूप देते थे। इन सबका संगम एक ऐसा दृश्य रच देता था जिसे देखकर लगता था मानो पूरा राज्य कोई उत्सव मना रहा हो। इतिहासकार डॉ श्रीकृष्ण जुगनू के अनुसार, भारतीय परंपरा में विवाह को एक संस्कार माना गया है। यह संस्कार और जिम्मेदारी हर व्यक्ति अपनी—अपनी आर्थिक व सामाजिक क्षमता के अनुसार पूरा किया करता था। आम घरों में भी विवाह 10 से 11 दिनों के लग्न हुआ करते थे जिसकी शुरुआत खंडन—मंडन, दाल दलने, विवाह गीतों आदि से हुआ करती थी। वहीं, राजघरानों में विवाह केवल दो व्यक्तियों का बंधन नहीं था, बल्कि वे सत्ता, सामर्थ्य और संस्कृति के प्रदर्शन का सबसे बड़ा मंच थीं। महाराणाओं के काल में मेवाड़ के महाराणा भीम सिंह और जय सिंह के शादियों के आयोजन भव्यता से परिपूर्ण थे। महाराणा जयसिंह की शादी में आतिशी बगीचे बनाए गए थे। केवल मेवाड़ ही नहीं बल्कि समस्त राजपूताने के राजघरानों जैसे जयपुर, जोधपुर, बूंदी, कोटा, बीकानेर, जैसलमेर आदि में विवाह के भव्य आयोजन ही हुआ करते थे जिसकी चर्चा इतिहास का हिस्सा रही हैं। इन्हीं रस्मों ने "रॉयल वेडिंग" की उस भारतीय अवधारणा को जन्म दिया जो आज ग्लोबल वेडिंग इंडस्ट्री का बेंचमार्क बन गई है।

महल–हवेलियों के होटलों में तब्दील होने के बाद पर्यटन का उछाल

1990 के बाद राजस्थान की अर्थव्यवस्था में एक बड़ा मोड़ आया— हवेलियों और महलों का हेरिटेज होटल में रूपांतरण। राजसमंद के देवगढ़ महल से लेकर उदयपुर की लेक पैलेस, जोधपुर का उम्मेद भवन और जयपुर का सिटी पैलेस, इन सबने एक नए "वेडिंग टूरिज्म" इकोसिस्टम को जन्म दिया। पर्यटन विभाग की रिपोर्टस बताती हैं कि 2000 के बाद राजस्थान में डेस्टिनेशन वेडिंग से होने वाली आय लगातार दोगुनी से ज्यादा गति से बढ़ी है। इनमें सबसे बड़ी भूमिका निभाने वाले शहरों में उदयपुर "सिटी ऑफ लेक्स" के रोमांटिक ब्रांड के कारण, जयपुर अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट और महल आधारित वेन्यू, जोधपुर व जैसलमेर राजसी भव्यता, मरुस्थलीय सौंदर्य और विदेशी आकर्षण के ब्रांड रहे हैं। हेरिटेज होटल चेन को ताज, ओबेरॉय, लीला जैसे ग्रुप्स ने इन इमारतों को न केवल संरक्षित किया, बल्कि उन्हें करोड़ों के विवाह उद्योग में परिवर्तित कर दिया।

हजारों परिवारों की आय का स्रोत

डेस्टिनेशन वेडिंग का असली प्रभाव जमीनी स्तर पर नजर आता है। रिसॉर्ट और होटल बुकिंग के साथ-साथ कैटरिंग, फूल, ऑर्गेनाइजेशन, डेकोर, मेहंदी, पारंपरिक कलाकार—सबको रोजगार मिलता है। एक मध्यम आकार की डेस्टिनेशन वेडिंग से 2-3 हज़ार लोगों को सीधा व अप्रत्यक्ष रोजगार मिलता है।

उदयपुर, जयपुर और जोधपुर जैसे शहरों में यह उद्योग हजारों परिवारों की आय का मुख्य स्रोत बन चुका है। होटल व्यवसायी राजेश अग्रवाल के मुताबिक डेस्टिनेशन वेडिंग ने पूरे राजस्थान को ही सबसे हॉट डेस्टिनेशन बना दिया है। एनआरआई, बिजनेसमैन, सेलिब्रिटीज, हाई क्लास, अपर मिडिल क्लास के अलावा अब सोशल मीडिया इंफलूएंसर्स भी डेस्टिनेशन वेडिंग करना पसंद कर रहे हैं। इससे राजस्थान में जिस जगह वो वेडिंग हो रही है, वह जगह और होटल अपने आप ही लाइमलाइट में आ जाता है। जैसे कैटरीना कैफ—विक्की कौशल की शादी सवाई माधोपुर के पास, कियारा आडवाणी और सिदधार्थ मल्होत्रा की शादी जैसलमेर और ईशा अंबानी से लेकर परिणीति चोपड़ा, आमिर खान की बेटी इरा खान आदि कई हस्तियों की शादियां उदयपुर में हो चुकी हैं। इन शादियों से ना केवल होटल इंडस्ट्री, बल्कि इससे जुड़े कई छोटे—बड़े व्यवसायियों को रोजगार मिलता है।

इनको मिलता है काम

- लोक कलाकार
- घूमर और कालबेलिया नृतक
- मांगणियार और लंगा गायक
- कच्छी घोड़ी और पपेट कलाकार
- फड़ चित्रकार और बंजारों के संगीत समूह
- मेहंदी कलाकार

छोटे व्यवसायी

- फूलवाले, टेंट हाउस
- हलवाई और कैटरिंग
- फोटोग्राफर, वीडियोग्राफर
- स्थानीय टैक्सी व ड्राइवर
- दर्जी, सजावट कर्मी

जब दुनिया ने देखी वेडिंग ऑफ़ द सेंचुरी

इतिहास सिर्फ भारत का नहीं, दुनिया का भी गवाह है। ब्रिटेन के राजघराने के प्रिंस चार्ल्स और प्रिंसेस डायना की शादी वर्ष 1981 में हुई। इस दुनिया को वेडिंग ऑफ़ द सेंचुरी कहा गया। शादी का लाइव टेलीकास्ट 40 देशों में किया गया था। 75 करोड़ लोगों ने इस शादी को टीवी पर देखा।

यह शादी सिर्फ समारोह नहीं थी, बल्कि यह ब्रिटिश क्राउन का ग्लोबल ब्रांड कैंपेन थी। इसके बाद 2011 में प्रिंस विलियम और कैट मिडलटन की शादी ने भी काफी सुर्खियों में रही। शादी को मॉर्डन मोनार्कीज पीआर मास्टर स्ट्रोक कहा गया। वहीं, सेलिब्रिटीज में जब से रवीना टंडन ने उदयपुर में शाही शादी की थी, तब से ये माना सकता है कि राजस्थान में डेस्टिनेशन वेडिंग की परम्परा सी बन गई है। जब जोधपुर में 2018 में प्रियंका चोपड़ा और निक जोनस की शादी हुई। इसके बाद डेस्टिनेशन वेडिंग का ट्रेंड ही शुरू हो गया। इसी तरह 2018 में ही अंबानी परिवार की बेटी ईशा अंबानी की शादी भारत के कॉर्पोरेट जगत का सबसे पावरफुल इवेंट मानी गई। उदयपुर में करीब 3 दिन का प्री वेडिंग सेरेमनीज की गई। इसमें अरबों का खर्च, हॉलीवुड—बॉलीवुड, बिजनेस, पॉलिटिक्स, स्पोर्टर्स सेलिब्रिटीज का लाइनअप और अंतरराष्ट्रीय मीडिया की नजरों ने इसे और खास बना दिया। ये इवेंट एक शादी कम और इंटरनेशनल वेडिंग इवेंट अधिक बन गई जिसकी चर्चा आज तक की जाती है।

इन शादियों के ट्रेंड के पीछे ये हैं कारण-

लीगेसी बिल्डिंग : जीवन के इस सबसे खास अवसर को लोग महज शादी नहीं बल्कि अपनी विरासत, अपनी पहचान और सामाजिक प्रतिष्ठा के रूप में संजोना चाहते हैं। लोग अपनी शादी के माध्यम से अपनी विरासत गढ़ना चाहते हैं। इसे एक ऐसी "परी कथा" बनाना चाहते हैं, जिसे पीढ़ियां याद रखें।

डिजिटल सोशलकेस कल्चर : आज सोशल मीडिया के इस दौर में लोग अपनी स्टारी इमेज बनाना चाहते हैं, सेलिब्रिटी सिंड्रोम सभी पर हावी हो चुका है। ऐसे में सभी खुद को हीरो—हीरोइन की तरह पेश करने में पीछे नहीं रहना चाहते हैं।

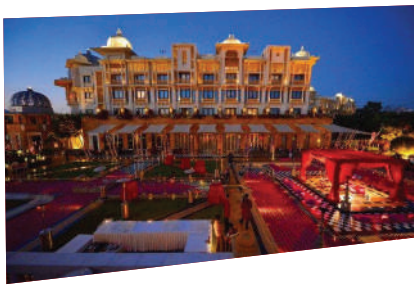

राजस्थानी परंपरा की महिमा: हर किसी को एक दिन के लिए "राजसी" महसूस करने की गहरी मनोवैज्ञानिक इच्छा है। लोग यहां के हैरिटेज होटलों, महलों व किलों में शादियां कर के खुद को वो अनुभव देते हैं जो जीवन भर यादगार रहता है।

ऐसे में अब साफ दिख रहा है कि राजस्थान की शादियां अब सिर्फ समारोह नहीं रहेंगी, बल्कि ऐसा अनुभव बनेंगी जिसकी चमक आने वाला नया दौर देखेगा।

सिनेमा के अमर सितारे को भावभीनी श्रद्धांजलि

धर्मेंद्र : सिनेमा का जन्मजात नायक

धर्मेंद्र केवल अभिनेता नहीं थे, भारतीय सिनेमा की आत्मा थे। छह दशकों से अधिक के उनके करियर ने रोमांस, एक्शन और करिश्मे की नई परिभाषाएं गढ़ीं। राजनीति में उनका सफर छोटा रहा, पर पर्दे पर उनकी चमक सदैव अडिग रही। सरल स्वभाव, बेबाक जीवन और अविस्मरणीय अभिनय ने उन्हें दर्शकों के दिलों में अमर बना दिया।

सुधांशु टाक
लेखक, समीक्षक

बॉलीवुड के दिग्गज अभिनेता रहे, 'ही-मैन' के नाम से मशहूर सुपर स्टार धर्मेंद्र का बीते 24 नवंबर को निधन हो गया। वे इसी साल 8 दिसंबर 2025 को अपना 90 वां जन्मदिन मनाने वाले थे। लेकिन नियति को कुछ और ही मंजूर था। उनके निधन के साथ ही उनके छह दशक से ज्यादा लंबे करियर का भी अंत हो गया। धर्मेंद्र को हमेशा उनकी सुंदरता, धमाकेदार स्क्रीन प्रेजेंस, उनके बेमिसाल अभिनय और विनम्र स्वभाव के लिए जाना व सराहा जाता था।

धर्मेंद्र एक बेहद ईमानदार इंसान थे। उन्होंने कभी भी अपनी कमियों को छिपाने की कोशिश नहीं की। लोग अक्सर अपनी कमजोरियों को ढकते हैं, लेकिन धर्मेंद्र ऐसे न थे। वे खुलकर अपनी कमियों पर बात करते थे। धर्मेंद्र की सबसे बड़ी कमजोरी रही शराब। अपनी शराब पीने की लत के लिए वे कुख्यात थे। बताते हैं कि फिल्म 'शोले' की शूटिंग के दौरान वह एक दिन में बीयर की 12 बोतल पी गए थे। धर्मेंद्र ने एक इंटरव्यू में बताया था, 'मैं कैमरामैन के पीछे बैठकर चुपके से स्टाफ द्वारा लाई गई शराब पी लेता था। जब प्रोडक्शन स्टाफ ने टोकते हुए मुझे बताया कि मैंने अब तक 12 बोतल बियर पी ली हैं, तो मैं हैरान रह गया।'

इसी क्रम में उन्होंने बताया था कि नशे में उन्होंने अपने पिता तक का कॉलर भी पकड़ लिया था, जिसका उन्हें मरते दम तक अफसोस रहेगा। धर्मेंद्र ने उस घटना को याद करते हुए बताया था, 'मैं जवान और नासमझ था, लेकिन जिंदगी का सलीका कुछ ऐसा है कि वह आपको नीचा दिखाने की भी कोशिश करती है, मैंने जिंदगी के सबक मुश्किलों से सीखे हैं।'

धर्मेंद्र राजनीति में भी सक्रिय रहे। उन्होंने 2004 के लोकसभा चुनाव में भारतीय जनता पार्टी के टिकट पर बीकानेर से चुनाव लड़ा। ये चुनाव काफी चर्चित भी रहा, क्योंकि तब धर्मेंद्र सिने वर्ल्ड के जाने माने सुपर स्टार थे।

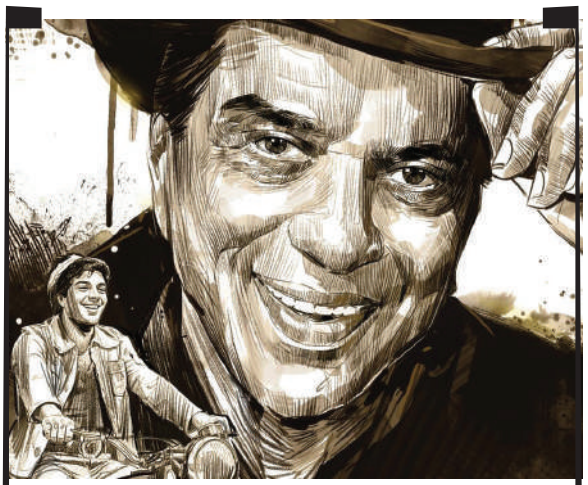

- धर्मेंद्र पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय अटल बिहारी वाजपेयी के काफी करीबी माने जाते थे। कहा जाता है कि यह रिश्ता राजनीति से परे एक व्यक्तिगत मित्रता का था। वाजपेयी जी उनकी फिल्मों के भी प्रशंसक थे। शुरू में तो उन्होंने बीकानेर की जनता के लिए काम करने की कोशिश की। स्थानीय मुद्दों को उठाया, लेकिन बाद में उनकी सक्रियता कम होती चली गई। फिर 2009 में धर्मेंद्र ने सांसद के तौर पर अपने पहले कार्यकाल के बाद सक्रिय राजनीति से खुद को दूर कर लिया।
- असल में धर्मेंद्र का पहला और सबसे बड़ा प्यार अभिनय ही रहा। वह फिल्मों की ओर वापस मुड़ना चाहते थे। परिवार के साथ समय बिताना चाहते थे। राजनीति की व्यस्त दिनचर्या और सार्वजनिक जीवन की पाबंदियां उन्हें रास नहीं आईं।
- धर्मेंद्र का जन्म 8 दिसंबर 1935 को पंजाब के लुधियाना जिले के नसराली गांव में एक साधारण स्कूल हैडमास्टर के घर में हुआ था। 1958 में 'टैलेंट हंट' प्रतियोगिता में भाग लेकर वे चर्चा में आए। फिर 1960 में फिल्म 'दिल भी तेरा हम भी तेरे' से डेब्यू किया। 1961 में 'शोला और शबनम' से सफलता की जो चिंगारी भड़की, उसने 1962 में 'अनपढ़' और 1963 में 'बंदिनी' की जादुई सफलता से शोला में बदल गई। इस दशक में धर्मेंद्र रोमांटिक स्टार बने रहे।

1970 का दशक शुरू हुआ और धर्मेंद्र बन गए एक्शन किंग

मेरा गांव मेरा देश (1971) ने उन्हें रफ-टफ बागी बना दिया, एक और फिल्मफेयर नॉमिनेशन उन्हें मिला। फिर आया स्वर्ण युग, सीता और गीता (1972), हेमा मालिनी की डबल रोल वाली धमाकेदार हिट; यादों की बारात (1973), सलीम-जावेद की पहली 'मसाला' ब्लॉकबस्टर; जुगनू (1973), एक और चार्टबस्टर, लेकिन कोई भी फिल्म सर्वकालिक महान, कल्ट 'शोले' (1975) को मात नहीं दे सकी। वीरू के रूप में, अमिताभ बच्चन के जय के साथ हंसी-मजाक करते धर्मेंद्र ने जो डायलॉग दिए वो पीढ़ियों तक गूंजते रहेंगे। उस वक्त भारत की सबसे ज्यादा कमाई वाली फिल्म 'शोले', कुछ थिएटर्स में पांच साल तक चली। 1970 और 1980 के दशक धर्मेंद्र के लिए कामयाबी भरे थेः इसी दशक में 1987 में धर्मेंद्र ने बैक टू बैक 7 हिट फिल्में 'इंसानियत के दुश्मन', 'लोहा', 'हुकूमत', 'आग ही आग', 'वतन के रखवाले', 'मर्द की जुबान' और 'जान हथेली पे' देकर समीक्षकों को अचंभित कर दिया था। उनके जीवनकाल में कुल 74 फिल्में हिट रहीं, जिनमें 7 ब्लॉकबस्टर और 13 सुपरहिट थी।

- पद्म भूषण (2012) से सम्मानित धर्मेंद्र ने न केवल मनोरंजन दिया, बल्कि अपने बेटों सनी देओल और बॉबी देओल को इंडस्ट्री में स्थापित भी किया। 'यमला पगला दीवाना' नामक फिल्मों की सीरीज के माध्यम से वे अपने अंतिम दिनों तक सक्रिय रहे। हां राजनीति में उनकी विफलता एक सबक दे गई, कि हर मंच के लिए अलग अभिनय चाहिए।
- *धर्मेंद्र चले गए, लेकिन उनकी मुस्कान, उनका जोश पर्दे पर जिंदा रहेगा। कुछ लोग सिनेमा के लिए ही जन्मे होते हैं, और धर्मेंद्र वही थे। राजनीति ने उन्हें न निगला, न चमकाया। बस एक छोटा सा अध्याय जोड़ा। और शायद यही जीवन का संतुलन है।*

'राजस्थान टुडे' परिवार की ओर से धर्मेंद्र की पुनीत आत्मा को विनम्र श्रद्धांजलि। शत- शत नमन..

ग्रहों की चाल

विपुल डोभाल, ज्योतिष, पीठाधीश्वर।
श्री शनिधाम आश्रम, विकासनगर देहरादून
ईमेल : vipravaani@gmail.com
मोबाइल : 9928424374

मेष

दिसंबर में करियर में प्रगति और नेतृत्व के अच्छे अवसर बनेंगे, आत्मविश्वास बढ़ेगा और पेंडिंग काम निपटाने का मौका मिलेगा। पैसे की स्थिति सुधरेगी, परन्तु अनावश्यक खर्च और गुस्से पर नियंत्रण रखना होगा, रिश्तों में छोटी-मोटी बातों पर टकराव से बचें।

वृषभ

वृषभ जातकों के लिए यह महीना आर्थिक स्थिरता और काम में ठहराव के बाद आगे बढ़ने का संकेत देता है, व्यवसाय या नौकरी में धीरे-धीरे लाभ के योग हैं। रिश्तों में भरोसा और शांत संवाद से निकटता बढ़ेगी, लेकिन ज़िद और आलस्य छोड़कर नई सीख और बदलाव स्वीकार करना ज़रूरी रहेगा।

मिथुन

मिथुन राशि वालों को करियर में नए अवसर, टीमवर्क और नए कॉन्ट्रैक्ट मिलने के योग हैं, पदोन्नति या वेतन वृद्धि जैसे संकेत भी मिल सकते हैं। सोच अधिक सक्रिय रहेगी, इसलिए ओवरथिंकिंग से बचें, रिश्तों और स्वास्थ्य दोनों के लिए संतुलित दिनचर्या और धैर्य की ज़रूरत रहेगी।

कर्क

कर्क राशि के लिए यह महीना घर-परिवार और भावनात्मक जीवन में संतुलन और सपोर्ट लेकर आएगा, पुराने घरेलू मसले सुलझने के योग हैं। कार्यस्थल पर नियमित मेहनत का फल मिलेगा लेकिन मूड-स्विंग और संवेदनशीलता को संभालना होगा, ध्यान-योग या आध्यात्म से लाभ रहेगा।

सिंह

सिंह जातकों के लिए दिसंबर नेतृत्व और तेज़ प्रगति का समय रह सकता है, काम में आपकी क्षमता की सराहना होगी और नए अवसर मिल सकते हैं। आय के अच्छे योग हैं लेकिन खर्च और दिखावे पर नियंत्रण रखना ज़रूरी है, प्रेम जीवन में यादगार समय और क्रिएटिव कामों से खुशी मिलेगी।

कन्या

कन्या राशि वालों को काम के क्षेत्र में नई स्पष्टता मिलेगी, कोई विचार या प्रोजेक्ट आगे चलकर बड़ा रूप ले सकता है। दिनचर्या, स्वास्थ्य और अनुशासन पर ध्यान देने से लंबे समय के लाभ मिलेंगे, थोड़ी लचीलापन अपनाने से रिश्तों में तनाव कम होगा।

तुला

तुला के लिए यह महीना संतुलन का इम्तहान है, करियर में नई संभावनाएं बनेंगी, पर धैर्य और स्पष्ट योजना की ज़रूरत होगी। पैसे के मामले में सावधानी रखें और बड़ा खर्च सोच-समझकर करें, रिश्तों में खुलकर बातचीत और समय देना आवश्यक रहेगा।

वृश्चिक

दिसंबर वृश्चिक के लिए बहुत खास रह सकता है, सूर्य और मंगल की स्थिति से ऊर्जा, आत्मविश्वास और काम में सफलता के योग बनते हैं। आध्यात्म और गहराई वाले विषयों की ओर झुकाव बढ़ेगा, साथ ही निजी रिश्तों में पुरानी उलझनों का हल निकलने और विश्वास बढ़ने के संकेत हैं।

धनु

धनु राशि वालों का आत्मविश्वास और उत्साह बढ़ेगा, नए प्रोजेक्ट या योजनाओं की शुरुआत के लिए अच्छा समय है। करियर में अवसर मिलेंगे, लेकिन निवेश और बड़े आर्थिक निर्णयों में जल्दबाजी से बचें, परिवार के साथ सौहार्दपूर्ण माहौल बना रहेगा बशर्ते स्वास्थ्य को नज़रअंदाज़ न करें।

मकर

मकर जातकों के लिए यह महीना धीरे-धीरे मज़बूत नींव बनाने का है, जिम्मेदारियां बढ़ेंगी पर लंबी अवधि में फायदा देंगी। आर्थिक स्थिति सुधारने के अवसर मिलेंगे, लेकिन काम और निजी जीवन के बीच संतुलन नहीं रखा तो थकान और तनाव बढ़ सकता है।

कुंभ

कुंभ राशि वालों की मौलिक सोच और नई योजनाएं करियर में आगे बढ़ा सकती हैं, नए प्रोजेक्ट शुरू करने के लिए समय सहायक है। पैसों में सुरक्षित विकल्प चुनना बेहतर रहेगा और रिश्तों में खुलकर और ईमानदारी से बात करने से संबंध मजबूत होंगे।

मीन

मीन जातकों के लिए यह महीना भावनात्मक और आध्यात्मिक रूप से गहराई लाएगा, कुछ लोगों के लिए दिशा बदलने या नए संकल्प लेने का समय हो सकता है। करियर में स्थिरता के साथ धीरे-धीरे सुधार दिखेगा, जबकि रिश्तों में संवेदनशीलता बढ़ेगी इसलिए अधिक अपेक्षा रखने की बजाय सहजता अपनाना लाभदायक रहेगा।

CELEBRATING 42 YEARS OF TRUST — THE LIQUID GOLD

स्वाद वो जो बना दे बात

मनभाती महक, लाजवाब स्वाद, भरपूर पौष्टिकता

ISO 22000 2018

सोना सिक्का®©

ये दिवाली सोने के सिक्कों वाली

डबल फिल्टर्ड मूंगफली तेल

आप सभी को सोना सिक्का परिवार की ओर से
करवा चौथ की हार्दिक शुभकामनाएँ!!

रिफाइंड मूंगफली तेल

सोना सिक्का के साथ अब सोने के सिक्कों की बरसात

270 ग्राम सोने के सिक्के
125 भाग्यशाली ग्राहक

सोना सिक्का की तरफ से सबको मिल रहा है
मौका सोने के सिक्के जीतने का
सोना सिक्का के 125 भाग्यशाली ग्राहक हर महीने
पायेंगे कुल 270 ग्राम सोने के सिक्कों का उपहार

15 लि., 15 कि.ग्रा. टीन में			5 लि. जार में	1 लि. बॉटल में
10 ग्राम के 5 सोने के सिक्के	5 ग्राम के 10 सोने के सिक्के	2 ग्राम के 20 सोने के सिक्के	5 ग्राम के 10 सोने के सिक्के	1 ग्राम के 80 सोने के सिक्के

प्रीमियम कच्ची घानी सरसों तेल

शुद्ध और सेहतमंद तेल

SHAKUN

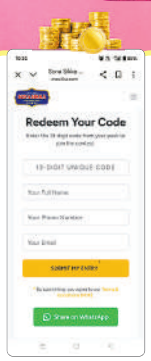

विजेताओं की घोषणा
लक्की ड्रॉ
द्वारा हर महीने की 5 तारीख को

सोना सिक्का तेल के किसी भी 15 लि. टीन,
5 कि.ग्रा. जार, 1 लि. बोतल पर दिये QR कोड स्केन कर
www.offer.sonasikka.com पर जायें.
आपके द्वारा खरीदे गए पैक में 13 अंको का यूनिक कोड
के द्वारा प्रतियोगिता में भाग लें और पायें
सोने के सिक्के जीतने का सुनहरा मौका

New Product

खुशबू, स्वाद और सेहत से भरी
सोना सिक्का सैफ्रॉन
(प्रीमियम कश्मीरी केसर)

SHYAM AND SHYAM OILS PVT. LTD. JODHPUR:

Plot No. B 5,6,7 (A), 1st Phase, Basni Industrial Area, Jodhpur (Raj.) 0291-2512333, 2512338

sonasikka.com | info@sonasikka.com | sonasikka डिस्ट्रीब्यूटर बनने एवं डीलरशिप हेतु टोल फ्री नम्बर पर सम्पर्क करें: 1800 313 3292

मिलते-जुलते नाम और अशुद्ध ब्रांड से सावधान. आपके स्वास्थ्य से बढ़कर कुछ नहीं

Available on : amazon | Flipkart

*नियम व शर्तें लागू. अधिक जानकारी के लिए सोना सिक्का के निकटतम विक्रेता से सम्पर्क करें। For Detail terms and condition please visit: www. offer.sonasikka.com All Rights reserved with Shyam and Shyam Oils Pvt. Ltd. Subject to Jodhpur Jurisdiction. Winners will be declared through Lucky Draw

बैंक ऑफ़ बड़ौदा
Bank of Baroda

तेज सुविधाजनक किफ़ायती बड़ौदा कार ऋण

- नियत और अनियत ब्याज दरों का विकल्प
- सभी मॉडल्स पर 90% ऑन रोड़ फायनांस
- दैनिक घटते शेष आधार पर ब्याज की गणना
- समय-पूर्व भुगतान का सुविधाजनक विकल्प
- समय-पूर्व ऋण चुकता करने पर शून्य प्रभार
- गृह ऋण ग्राहकों और इलैक्ट्रिक वाहन ऋण के लिए ब्याज दर में 25 बीपीएस की छूट

#bobCarLoan

आवेदन के लिए स्कैन करें

साइबर अपराध शिकायतों की रिपोर्ट के लिए 1930 पर संपर्क करें/ www.cybercrime.gov.in पर विजिट करें।

कार लोन हेतु 846 700 1133 पर मिस कॉल करें*

www.bankofbaroda.in

Follow us on

ऑफर सीमीत समय के लिए

बैंक ऑफ़ बड़ौदा
Bank of Baroda

घर = खुशियां

बड़ौदा गृह ऋण

- बड़ौदा मैक्स सेविंग्स होम लोन के साथ करें अधिकतम बचत
- महिला उधारकर्ताओं के लिए ब्याज दर में 0.05% की रियायत
- जेन ज़ेड और मिलेनियल्स (40 वर्ष से कम आयु वर्ग) के लिए ब्याज दर में 0.10% की रियायत
- आसान टॉप-अप सुविधा उपलब्ध
- दैनिक घटते शेष के आधार पर ब्याज की गणना

#bobHomeLoan

आवेदन के लिए स्कैन करें

होम लोन हेतु 846 700 1111 पर मिस कॉल करें*

www.bankofbaroda.in

हमें फॉलो करें